मूल्य १०/-

# मान मन्दिर बरसाना

मासिक पत्रिका , ज्येष्ठ-आषाढ़ , श्रीकृष्ण सं.५२५०, वि.सं. २०८१ (जून २०२४ ई.), वर्ष ०८, अंक ०६

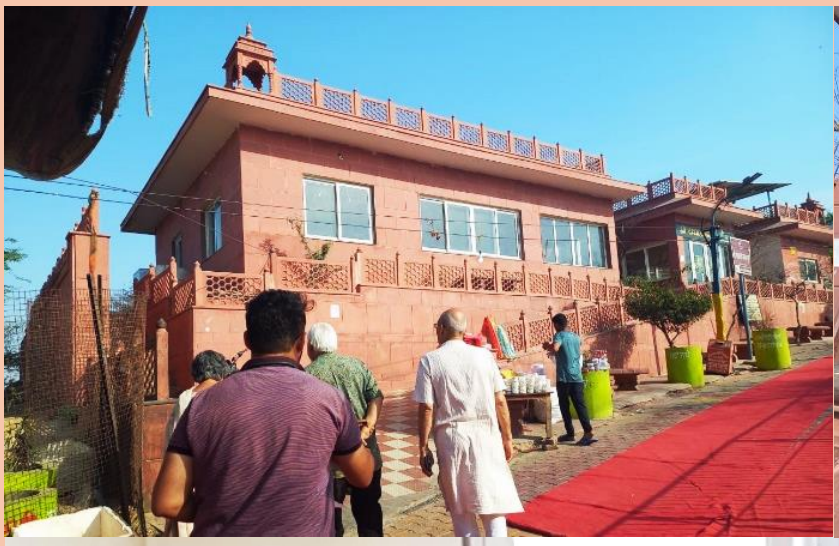

श्री राधारानी
रसोई निःशुल्क

॥ जय श्री राधे ॥
श्री माताजी गौशाला, बरसाना
(श्री मान मंदिर सेवा संस्थान)
द्वारा
निःशुल्क भण्डारा प्रसाद सेवा
स्थान
श्री राधारानी जलपान गृह
(श्रीजी मंदिर)
समय
प्रातः 9 बजे से दोपहर 2 बजे तक
सायः 5 बजे से 8 बजे तक
91 9927916699, 8057994000, 9991990404

# अनुक्रमणिका

विषय- सूची — पृष्ठ- संख्या


१ परमाद्भुत महिमामय 'राधा' नाम..............................०५
२ बाबाश्री की भाव-कथाएँ.........................................०९
३ संकीर्तन का चमत्कार..............................................१२
४ मानिनीश्री की मानलीला.........................................१४
५ श्रीसंत-सन्निधि का संप्रभाव......................................१९
६ निष्काम भावना से आराधन-शक्ति का प्राकट्य .............२४
७ ब्रज की शान 'राधारानी ब्रजयात्रा'..............................२६
८ श्रीयशोदाजी का गह्वर-आगमन.................................३०
९ श्रीइष्ट-आराधन का आधार 'गौ-सेवाराधन'...................३३





INSTAAL करें ---
PLAY STORE से
**MANINI APP**
बाबाश्री के सत्संग/ कीर्तन/भजन, साहित्य, मासिक पत्रिका आदि यहाँ से FREE - DOWNLOAD कर सकते हैं व सुन सकते हैं ।

## || राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो ।
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो ।
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो ।
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो ।
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो ।
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्यो ।

— *पूज्यश्री बाबामहाराज कृत*

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८.०० से ९:३० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:३० से ८:०० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं ।


संरक्षक- **श्रीराधामानबिहारीलाल**
प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर , गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)
mob. राधाकांत शास्त्री .......9927338666, Website :www.maanmandir.org )
(E-mail :info@maanmandir.org)


**परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –**
**"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले ।"**

*** योजना ***

**अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकालें व मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवाद्रव्य किसी विश्वसनीय गौसेवा प्रकल्प को दान कर गौरक्षा कार्य में सहभागी बन अनन्त पुण्य का लाभ लें । हिन्दूशास्त्रों में अंशमात्र गौसेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है ।**

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें । हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है – **सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ । जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि ।।** (श्रीमद्भागवत३/७/४१)
अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंश के बराबर भी नहीं हो सकता ।

# प्रकाशकीय

आसक्ति धन में होती है अथवा घर-परिवार में, परिणाम उसका दुःखद ही होता है । मनुष्य शरीर केवल भगवत्प्राप्ति के लिए ही मिला है परन्तु हम उसे भूलकर बाह्यजगत के आकर्षण में अन्धे हो जाते हैं । जिन्हें हम अपना मानते हैं, वे हमारे शत्रु भी हो सकते हैं, इस सन्दर्भ में एक दृष्टान्त आता है, उससे समझा जा सकता है कि भगवान् की माया कितनी विचित्र और सशक्त है ।

एक सेठजी मकान बनवाते समय कह रहे थे कि इतना मजबूत मकान बनना चाहिए कि हजार वर्ष तक गिरे नहीं । इस बात को सुनकर एक महात्मा हँसते हुए उधर से आगे बढ़ गये । सेठजी को उनका हँसना अच्छा नहीं लगा परन्तु साधु जानकर कुछ नहीं कहा । कुछ दिन बाद महात्माजी ने उधर से जाते समय देखा कि एक कसाई एक बकरे के पीछे-पीछे आ रहा था । रास्ते में बकरा सेठजी के चबूतरे पर अन्न के दाने खाने लगा । कसाई बकरे को खींचने लगा परन्तु बकरा सेठजी के पैरों में घुसकर मानो जीवन की भीख माँग रहा हो । बकरे की कीमत दो रुपये की जगह पौने दो रुपये की जिद के कारण बकरा कसाई की भेंट चढ़ गया । यह देखकर सन्तजी को हँसी आ गई । सेठजी ने वक्रदृष्टि से उनको देखा तो अवश्य परन्तु कुछ कह नहीं पाए । कुछ दिन पश्चात् एक और घटना घटी । सेठजी ने कहा – 'सेठानी थाली लगा दो, भूख लगी है ।' सेठानी ने थाली चौक में रख दी, जहाँ उन्हीं का बच्चा खड़े होकर पेशाब कर रहा था, जिसकी छींट थाली में पड़ रही थी । सेठजी ने कहा कि यह थाली बदल दो, बच्चे ने पेशाब कर दिया है । सेठानी बोली कि गंगा जल और पूत के मूत में दोष नहीं देखा करते, चुपचाप भोजन कर लो । अब तो सेठजी उसी थाली में भोजन करने लगे । संयोग से वही सन्त उधर से पुनः निकले और सेठ को देखकर हँसने लगे । सेठजी से रहा नहीं गया और क्रोध में भरकर संतजी को बुलाया तथा हँसने का कारण पूछा । संतजी ने कहा – 'मूर्ख ! एक वर्ष में तू मर जाएगा और हजार वर्ष जीने के स्वप्न देख रहा है । पहली बार जब मैं तुझे देखकर हँसा था, उसका यह कारण था । दूसरी बार हँसने का कारण बताते हुए उन्होंने कहा कि तुम चार आने के लोभ में अपने पिता को नहीं बचा पाए । वह बकरा पूर्व जन्म में तुम्हारा पिता ही तो था । तीसरी बार क्यों हँसे तो इसके उत्तर में संतजी ने कहा – नादान ! जिस बच्चे के पेशाब को तू पी गया, वह तुम्हारी पत्नी का यार था, मरकर वह तुम्हारा बच्चा बन गया ।' महात्माजी की बातें सुनकर सेठजी को वैराग्य हो गया और वे सन्त बन गये ।

ऐसी शिक्षाप्रद कथायें हम श्रवण कर भी लेते हैं परन्तु हमारी आँखें नहीं खुलती हैं । मनुष्य शरीर भोगासक्तियों के लिए नहीं अपितु भगवच्छरणासक्ति (श्रीभगवान् के चरणारविन्दों की आसक्ति) के लिए मिला है । "सब तज हरि भज" । निरन्तर राधा-माधव का चिन्तन करते हुए अपने जीवन को सफल बनायें, अन्यथा चौरासी लाख योनियों में भटकते हुए अनन्त कष्ट भोगते रहेंगे ।

**प्रबन्धक**

राधाकान्त शास्त्री
श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान

# परमाद्भुत महिमामय 'राधा' नाम

**बाबाश्री द्वारा पदगान (१६/५/२०२४) में राधानाम-महिमा का गान**

गोस्वामी तुलसीदासजी ने रामचरितमानस के बालकाण्ड में 'राम' नाम की अगाध महिमा का बड़े विस्तार से वर्णन किया है किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि सम्पूर्ण 'राम' नाम की महिमा को एक राधा नाम में न्यौछावर कर दिया है । राम नाम में दो अक्षर हैं – रा और म, और अधिक विस्तार करें तो र, उसमें बड़ा अ तथा म – तीन अक्षर हैं किन्तु बरसाने में श्रीजी के अनन्य रसिक सन्त श्रीकिशोरीअलीजी कहते हैं कि तीन अक्षर के स्थान पर राधा नाम का तो केवल एक अक्षर 'रा' (र में बड़ा अ) कह दो, – केवल इतने से ही राधारानी की कृपा मिल जाएगी । **'आधो नाम तारिहैं श्रीराधा ।'** 'को बड़ छोट कहत अपराधू' – छोटा-बड़ा कहना अपराध है । जो भावुक सन्त हैं, वे भावना के बल पर इसमें भी भेद लगा लेते हैं और इसे सही माना गया है । किशोरी अलीजी कहते हैं कि केवल 'रा' कह दो, इतने से ही राधारानी आ जायेंगी । और फिर 'जुग अक्षर' यानि 'राधा' नाम पूरा ले लिया – 'जुग अक्षर की महिमा को कहै' – राधा नाम के दो अक्षरों की महिमा कोई नहीं कह सकता ।

राधा राधा राधा राधा राधा..... गोस्वामी तुलसीदासजी कृत श्रीरामचरितमानस का बालकाण्ड नाम-महिमा से भरा हुआ है । इसमें पचासों दोहे हैं किन्तु आश्चर्य है, गोस्वामीजी जानते हैं कि कौन बड़ा, कौन छोटा, ऐसा नहीं कहना चाहिए किन्तु वे कह गये । 'राम' नाम में तीन अक्षर हैं किन्तु किशोरी अलीजी कहते हैं – 'आधो नाम' – केवल 'रा' कह दो, 'धा' कहने की भी आवश्यकता नहीं और केवल इतने से ही राधारानी दया करेंगी । 'आधो नाम तारिहैं श्रीराधा ।' राधारानी में दया के अतिरिक्त कुछ नहीं है, न था, न है और न होगा । 'जुग अक्षर की महिमा को कहै' युगल अक्षर 'राधा' नाम की महिमा तो कोई भी नहीं कह सकता है । 'गावत वेद पुराण अगाधा ।' भावना के बल पर श्रीकिशोरीअलीजी कितनी बड़ी बात कह गये, जिसे स्थूल (मोटी) बुद्धि वाला समझ ही नहीं पायेगा, वह समझेगा कि वेद-शास्त्र 'राधा' नाम की महिमा कह रहे हैं । लेकिन 'किशोरीअलीजी' कहते हैं कि राधा नाम का केवल आधा अक्षर 'रा' ही तार देगा । किशोरी अलीजी रामचरितमानस में 'राम' नाम की महिमा से आगे की बात कह गये । चार वेद हैं, अट्ठारह पुराण हैं, छः शास्त्र हैं; ये सब राधा नाम की महिमा नहीं कह पाए । **'जुग अक्षर की महिमा को कहै, गावत वेद पुराण अगाधा ।'** वेद-पुराणों ने भगवान् की अगाध महिमा का गान किया है किन्तु 'राधा' नाम के दो अक्षरों की महिमा ये नहीं कह पाये । **'रा के कहे रोग सब मिटिहैं, धा के कहे मिटे भव बाधा ।'** सबसे बड़ा रोग – 'भवरोग' रा के कहने से ही मिट जाता है, जड़ से समाप्त हो जाता है । 'धा' के कहने से भव-बाधा समाप्त हो जाती है, सदा के लिए मिट जाती है, उसकी राख भी नहीं बचती है । कोई लकड़ी जलती है तो राख बन जाती है, अब उसको फूँक दो, जल में बहा दो तो राख भी चली जायेगी । अनन्त रोग हैं, केवल 'रा' कहने से ही पूर्णतया समाप्त हो जाते हैं । 'रोग' बाधा उत्पन्न करता है । 'धा' कहने से समस्त बाधाएँ नष्ट हो जाती हैं । श्रीराधासुधानिधि में कहा गया है –

**अनुल्लिख्यानन्तानपि सदपराधान् मधुपतिर्-**
**महाप्रेमाविष्टस्तव परमदेयं विमृशति ।**
**तवैकं श्रीराधे गृणत इह नामामृतरसं**
**महिम्नः कः सीमां स्पृशति तव दास्यैकमनसाम् ॥**

(श्रीराधासुधानिधि – १५४)

किसी ने अनन्त महदपराध (महापुरुषों के प्रति अपराध) किये थे । महदपराध के कारण तो वैकुण्ठ से भी पतन हो जाता है । वैकुण्ठ में भगवान् के पार्षद जय-विजय के द्वारा सनकादिक मुनियों के प्रति अपराध हो गया । इस महदपराध के कारण उनका वैकुण्ठ से पतन हुआ और तीन जन्मों में उन्हें दुर्दान्त असुर बनना पड़ा । महदपराध के कारण भगवद्धाम वैकुण्ठ और गोलोक से भी पतन हो जाता है । अनन्त ब्रह्माण्ड नायक मधुपति श्रीकृष्ण ने सुना कि कोई 'राधा' नाम का उच्चारण कर रहा है किन्तु उसने एक-दो नहीं अनन्त महदपराध किये थे । वैसे तो एक ही महदपराध वैकुण्ठ अथवा गोलोक तक से नीचे गिरा देता है, भगवत्पार्षद से असुर बना देता है । जय-विजय वैकुण्ठ के पार्षद थे किन्तु सनत्कुमारों के अपराध के कारण उन्हें

तीन जन्मों में हिरण्याक्ष-हिरण्यकशिपु, रावण-कुम्भकर्ण और शिशुपाल-दन्तवक्त्र बनना पड़ा । वे ही प्रलयकालीन समुद्र में मधु-कैटभ भी बने थे । एक बार के महापुरुष के प्रति अपराध के कारण वैकुण्ठ के पार्षदों की ऐसी दुर्गति हुई किन्तु एक व्यक्ति ने अनन्त महदपराध किये थे तो अनन्त बार उसको असुर बनना चाहिए था लेकिन एक बार उसने 'राधा' नाम का उच्चारण किया तो उसके सभी महदपराध नष्ट हो गये । अपराध तो समाप्त हो गये, अब बचा क्या ? 'अपराध' माने दण्ड – 'अप' का अर्थ है - अपमान, 'राध' संसिद्धौ - सिद्धियाँ मिलने वाली थीं, नष्ट हो गयीं; इसको अपराध कहते हैं । एक बार के 'राधा' नाम के उच्चारण से अपराध तो समाप्त हो गये, अब बचा क्या ? पुरस्कार । मधुपति श्रीकृष्ण विचार करने लगे कि इस 'राधा' नाम का उच्चारण करने वाले को मैं क्या दूँ ? अब पुरस्कार देने की भी कुछ शक्ति भगवान् में नहीं है । 'राधा' नाम उच्चारण की महिमा तो देखो, अनन्त महदपराध अथवा सदपराध जितने भी थे, सब नष्ट हो गये । अब इन अपराधों का श्रीकृष्ण विचार भी नहीं करते । अब इसको दण्ड तो देना नहीं है, पुरस्कार क्या दें ? कुछ है तुम्हारे पास ? अनन्त ब्रह्माण्डनायक हो तो दो-चार ब्रह्माण्ड ही दे दो, मधुपति श्रीकृष्ण बोले कि मेरे पास कुछ नहीं है । अनन्त महदपराध जिसने किये थे, उसने एक बार 'राधा' नाम का उच्चारण किया तो उसके सभी अपराध नष्ट हो गये तथा मधुपति श्रीकृष्ण उसके प्रति महान प्रेम में आविष्ट हो गये और विचार करने लगे कि इसको मैं क्या दूँ ? मेरे पास तो इसको देने के लिए कुछ भी नहीं है । 'तवैकं श्रीराधे गृणत इह नामामृतरसम्' – इस अनन्त महदपराधी ने केवल एक बार 'राधा' नाम कहा था । 'महिम्नः कः सीमां स्पृशति तव दास्यैकमनसाम् ।' - उसकी महिमा की सीमा तो कोई कह ही नहीं सकता, हे राधे ! जो आपकी दासी बनना चाहता है । 'आधो नाम तारिहैं श्रीराधा । अली किशोरी नाम रटत नित, लागी रहत समाधा ॥' जब राधा नाम की महिमा कोई कह ही नहीं सकता, गा नहीं सकता तो फिर होगा क्या ? समाधि लग गयी, न गा सके, न बोल सके, न कुछ सुन सके । सम्यक् आधियन्ते इति समाधि, 'सम्यक् आधि' – मन डूब गया । अब न कुछ कहने का समय है, न सुनने का समय है । केवल समाधि लगी हुई है, अन्य सभी साधन डूब गये । इसीलिए अनन्य श्रीराधाचरणाश्रित रसिकाचार्य श्रीहितहरिवंश महाप्रभु के शिष्य एवं विशाखा सखी के अवतार श्रीहरिरामव्यासजी महाराज ने कहा है – **'परम धन राधा नाम अधार ।'** मनुष्य की तो सामर्थ्य ही क्या है, जिस 'राधा' नाम की आराधना स्वयं श्रीकृष्ण करते हैं – **'जाहि श्याम मुरली में टेरत, निश दिन बारम्बार ।'** चौबीस घंटे अहर्निश श्यामसुन्दर 'राधा' नाम रटते रहते हैं । **'श्रीशुक प्रकट कियो नहीं यातें, जानि सार को सार ।'** सम्पूर्ण श्रीमद्भागवत कहने पर भी श्रीशुकदेवजी ने राधा नाम उसमें प्रकट ही नहीं किया । १८ हजार श्लोक उनके द्वारा गाये गये किन्तु राधा नाम का कहीं भी उच्चारण नहीं किया । सम्पूर्ण भागवत पढ़ लो, उसमें १८ हजार श्लोक हैं किन्तु 'राधा' नाम कहीं नहीं है । इसीलिए व्यासजी कहते हैं – **'श्रीशुक प्रकट कियो नहीं यातें, जानि सार को सार ।' 'जन्त्र मन्त्र अरु वेद तन्त्र में, सबै तार को तार ।'** समस्त जन्त्र-मन्त्र एवं वैदिक साहित्य में सबसे महत्वपूर्ण, सबसे आगे तारने वाला 'राधा' नाम ही है । स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण भी 'राधा' नाम की महिमा को नहीं जान पाए । **'कोटिक रूप धरें नन्दनन्दन, तऊ न पावें पार ।'** छद्म रूप से श्यामसुन्दर बरसाना में आते हैं, कभी मालिन बनकर आते हैं, कभी गोप देवी के रूप भी आते हैं, कभी साँवरी सखी बनकर आते हैं । इनके अनन्त अवतार हुए और श्रीकृष्णलीलाकाल में भी ब्रज में इन्होंने अनन्त रूप धारण किये, फिर भी वे 'राधा' नाम की अनन्त महिमा का पार नहीं पा सके । जब भगवान् ही 'राधा' नाम की महिमा का पार नहीं पा सके तो कोई अन्य कहाँ से 'राधा' नाम की अचिन्त्य महिमा को जान पायेगा । 'श्रीशुक प्रकट कियो नहीं यातें जानि सार को सार ।' चार वेद और अठारह पुराणों के सार का भी सार है 'राधा' नाम, यह अत्यधिक गोपनीय धन है, इसीलिए शुकदेवजी ने 'राधा' नाम का भागवत में उच्चारण नहीं किया ।**'व्यासदास अब प्रगट बखानत, डारि भार में भार ॥'** व्यासजी कहते हैं कि मैंने सभी अपराधों को भाड़ में फेंक दिया, जो राधा-राधा कहता है, उसके सभी पाप-पुण्य नष्ट हो जाते हैं, वह सभी द्वन्दों (राग-द्वेष, सुख-दुःख इत्यादि पुण्य-पाप के फल रूपी गुण-

धर्मों) से छूटकर राधारानी के भाव (प्रेम) को प्राप्त कर लेता है । 'राधा' नाम की महिमा का वर्णन राधासुधानिधि के श्लोक - १५४ में ग्रन्थकार ने जो किया है, उसी को पुनः समझने का प्रयास करना चाहिए । अनन्त महदपराधी ने केवल एक बार राधा नाम का उच्चारण कर लिया तो उसके सभी अपराध नष्ट हो गये और मधुपति श्रीकृष्ण उसके प्रति प्रेम से भरकर, विमृशति – विचार करने लगे कि राधा नाम उच्चारण करने वाले इस मनुष्य को मैं क्या दूँ ? उनके पास उसे देने के लिए कुछ नहीं है । 'श्रीराधासुधानिधि के श्लोक – १५४' में ग्रन्थकार ने जिस तरह 'राधा' नाम की अद्वितीय महिमा का वर्णन किया, उसी प्रकार व्यासजी ने 'राधा' नाम की अगाध महिमा का गायन करते हुए लिखा – 'परम धन राधा नाम अधार ।' श्यामसुन्दर अपनी वंशी में दिन-रात 'राधा' नाम गाते रहते हैं । उन्होंने 'राधा' नाम की महिमा का रहस्य जानने के लिए करोड़ों रूप धारण किये, मालिन बने, मनिहारिन, मनावनहार इत्यादि बने, करोड़ों अवतार धारण करने पर भी भगवान् 'राधा' नाम की महिमा को नहीं जान सके । जब भगवान् ही नहीं जान सके तो हम जैसे लोग तो मक्खी-मच्छर से भी निम्न हैं, हम उसे कैसे जान सकते हैं ? अनन्त महापुरुषों के प्रति किया गया अपराध कभी नष्ट नहीं होता है किन्तु 'राधा' नाम के उच्चारण से ऐसे अक्षम्य अपराध भी नष्ट हो जाते हैं और 'राधा' नाम का एक बार भी उच्चारण करने वाले महदापराधी के प्रति प्रेमाविष्ट होकर मधुपति राधावल्लभलालजी विचार करने लग जाते हैं कि इसको मैं क्या दे दूँ ? मेरे पास इसको देने के लिए कुछ भी नहीं है । इतने गरीब हैं भगवान्, अनन्त ब्रह्माण्ड नायक होकर भी वे बड़े गरीब हैं । यह 'राधा' नाम की अनन्त महिमा है कि 'राधा' नाम लेने वाले को इसके बदले में कुछ देने में भगवान् अपने को असमर्थ मानने लगते हैं । एक अत्यन्त गोपनीय बात हम बताते हैं । मेरे गुरुदेव परम पूज्य श्रीप्रियाशरणजीमहाराज दिन-रात 'राधा' नाम रटते थे, अन्य कोई मन्त्र आदि नहीं जपते थे । ऐसा मैंने स्वयं देखा और सुना है । यह अत्यधिक गुप्त घटना है । एक बार वे राधाकुण्ड के किनारे बैठे थे, मैं भी उनके साथ में था । अवसर देखकर मैंने उनसे कहा – 'महाराजजी ! सब लोग मुझसे कहते हैं कि तुम्हारे पास कोई मन्त्र नहीं है, ऐसी स्थिति में मुझे क्या करना चाहिए ?' मेरी बात को सुनकर पूज्य महाराजश्री ने राधाकुण्ड का जल लिया और बोले – 'जन्त्र-मन्त्र अरु वेद तन्त्र में सबै तार को तार ।' 'तू राधा नाम जपता है । इससे बड़ा मन्त्र और क्या हो सकता है ? करोड़ों वैदिक मन्त्रों से भी आगे और समस्त जन्त्र-मन्त्र-तन्त्र को भी तारने वाला यह 'राधा' नाम है । 'राधा' नाम का उच्चारण करने वाले को देने के लिए तो भगवान् के पास भी कुछ नहीं रहता है । मैं तो सदा 'राधा' नाम का ही जप करता हूँ । अतः तुम भी राधा नाम का ही आश्रय लो ।' राधासुधानिधि का श्लोक – १५४ 'राधा' नाम की महिमा का बहुत ठोस प्रमाण है । सभी को इसको देखना चाहिए । इसी प्रकार व्यासजी का यह पद भी 'राधा' नाम की अनुपम महिमा का उद्घोष करता है – 'परम धन राधा नाम अधार । श्रीशुक प्रकट कियो नहीं याते, जानि सार को सार ।' परमहंससंहिता श्रीमद्भागवत के १८ हजार श्लोकों का भी सार है – 'राधा' नाम । अतः जो राधा नाम गाता है, उसको किसी भी प्रकार की कोई शंका नहीं करनी चाहिए । क्या मन्त्र, क्या दीक्षा, क्या गुरु, क्या शिष्य, राधा नाम लेने वाले को इनकी कोई आवश्यकता नहीं है । गिरिराजजी में पण्डित रामकृष्णदासबाबा नामक सिद्ध महापुरुष रहा करते थे । श्रीचैतन्य महाप्रभु के सम्प्रदाय में वे दीक्षित थे । गौड़ीय सम्प्रदाय में श्रीचैतन्य महाप्रभु को राधामाधव के मिलित विग्रह का अवतार माना जाता है । जो राधा नाम लेता है, उसको श्यामसुन्दर सदा स्मरण करते हैं । वे स्वयं भी अपनी वंशी में दिन-रात राधा नाम गाते हैं । कल्याण करने वाले जन्त्र-मन्त्र और समस्त वेद-तन्त्र में उन सबका भी उद्धार करने वाला 'राधा' नाम है । करोड़ों रूप धारण करके भी श्यामसुन्दर राधा नाम की अनन्त महिमा का पार नहीं पा सके । शुकदेवजी ने भागवत में १८ हजार श्लोक गाये किन्तु राधा नाम स्पष्ट रूप से नहीं गाया । भागवत में राधा नाम से सम्बन्धित एक भी श्लोक नहीं है । व्यासजी कहते हैं कि सभी ने राधा नाम को बहुत छिपाया किन्तु अब मैं राधा नाम की महिमा को प्रकट करता हूँ, स्पष्ट रूप से डंके की चोट पर समस्त नामापराध, महदापराधों को भाड़ में जलाकर राधा नाम की महिमा का बखान करता हूँ । मैंने सभी अपराधों को भाड़ में डाल दिया ।

'व्यासदास अब प्रगट बखानत, डारि भार में भार ।'

अस्तु, एक बार मेरे गुरुदेव पूज्य श्री प्रियाशरण बाबा महाराज ने अपने शिक्षा गुरु गोवर्धनवासी पण्डित श्रीरामकृष्णदासबाबामहाराज से कहा कि मैं एक बार नदिया (नवद्वीप) जाना चाहता हूँ, जो श्रीचैतन्य महाप्रभु की जन्मभूमि है । ऐसा कहकर जब वे सो गये तो स्वप्न में उन्हें एक ब्रजयुवती के दर्शन हुए, जिसने पूज्य प्रियाशरण बाबा की सामान की पोटली को निकुंज में रख दिया । इसके बाद ही उनकी नींद खुल गयी और इस विचित्र स्वप्न से हतप्रभ से होकर उन्होंने पण्डित बाबा से इसका अभिप्राय पूछा तो उन्होंने कहा कि वह युवती कोई और नहीं, स्वामिनी श्रीराधारानी की सहचरी थी, जो तुझसे कह रही थी कि अब मैं तेरी पोटली को सदा के लिए ब्रज की निकुंज में रख रही हूँ, अब कभी ब्रज के बाहर जाने की सोचना भी मत । इसी ब्रज धाम में साक्षात् श्रीप्रिया-प्रियतम प्रकट हैं तो फिर उनके उपासक को इस धाम के बाहर जाने से क्या प्रयोजन ? अखण्ड रूप से बरसाना में वास करने वाले अनन्य श्रीजी के रसिक नागरीदासजी कहते हैं – 'नागरिदास द्वारका मथुरा, इनसों कैसो काम ।' द्वारका जाने और मथुरा जाने की भी कोई आवश्यकता नहीं है । राधा नाम रटते हुए पूज्य श्रीप्रियाशरणजीमहाराज ने अपना सम्पूर्ण जीवन ब्रज में ही व्यतीत कर दिया; गिरिराजजी में ही उन्होंने देह का त्याग किया । उनके अंतिम संस्कार में मैं भी गोवर्धन गया था । वह बड़ी ही चमत्कारिक घटना थी । पण्डित बाबा ने पूज्य प्रियाशरणबाबा से कहा था कि नदिया आदि में जाने की कोई आवश्यकता नहीं, अखण्ड रूप से ब्रजवास करो । यह धाम मिलित श्रीराधामाधव का अवतार, उन्हीं का स्वरूप है । निष्ठापूर्वक राधामाधव के इस धाम में वास करते हुए, मेरे गुरुदेव श्रीप्रियाशरणजी महाराज अन्त में ब्रज रज में ही लीन हो गये । इसलिए न तो नवद्वीप जाना है, न जगन्नाथपुरी जाना है और न ही द्वारका जाना है । साक्षात् यह धाम मिल गया है, मैं अपने बारे में नहीं, तुम सबके बारे में कह रहा हूँ कि राधामाधव का स्वरूप यह धाम तुम लोगों को प्राप्त हो गया है ।

**मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पाप योनयः ।**
**स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम् ॥**

(श्रीगीताजी ९/३२)

भगवान् ने गीता में कहा है कि स्त्री, वैश्य और शूद्र आदि पाप योनियाँ हैं । यदि वे भी मुझ कृष्ण का आश्रय ग्रहण करते हैं अर्थात् श्रीकृष्ण भी जिनके आश्रय में रहते हैं, उन 'श्रीराधा' का नाम ग्रहण करते हैं तो उनके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं । 'डारि भार में भार' – जो 'राधा-राधा' नाम रटता है, उसको दीक्षा की, गुरुमन्त्र लेने की कोई आवश्यकता नहीं है । गुरु-दीक्षा लेना, ये सब चक्कर है । 'दीक्षा' दीयन्ते, मन्त्र प्राप्त हुआ और उससे 'क्षा' - पाप नष्ट हो गये । 'क्षीयन्ते सर्व पापानि' – सभी पाप नष्ट हो गये, इसको दीक्षा कहते हैं । सबका सार, जो 'राधा-राधा' नाम ग्रहण करता है, उसको दीक्षा की, किसी मन्त्र-तन्त्र की, गुरु बनाने की कोई आवश्यकता नहीं है । 'जन्त्र-मन्त्र अरु वेद-तन्त्र में, सबै तार को तार ।' मेरे गुरुदेव ने जीवन भर यही किया, सदा राधा नाम का ही आराधन किया, अन्य मन्त्र जैसे गोपाल मन्त्र आदि को नहीं जपा, अखण्ड रूप से ब्रजवास किया और अन्त में इसी धाम में लीन हो गये ।

यह बहुत बड़ी समस्या है, जब कोई ब्रज में आता है तो उससे लोग कहते हैं कि मन्त्र ग्रहण करो, इसके लिए दीक्षा लो, गुरु बनाओ । 'कोटिक रूप धरें नन्दनन्दन, तऊ न पायो पार ।' जब भगवान् ही करोड़ों रूप धारण करने पर भी 'राधा' नाम का पार नहीं पा सके, फिर हम लोग तो चींटी-चींटा से भी छोटे जीव हैं । अतएव केवल 'राधा-राधा' रटो, बाकी किसी मन्त्र-तन्त्र की, गुरु-दीक्षा आदि की 'राधा' नाम के समक्ष कोई आवश्यकता नहीं है । यह परम रस की अत्यन्त गुप्त बात मेरे गुरुदेव ने मुझे बताई थी और इसी कारण हम भी आज तक किसी मन्त्र-दीक्षा, गुरु-दीक्षा और शिष्य बनाने के चक्कर में नहीं पड़े । न तो कोई मेरा शिष्य है, न शिष्या है, न तो है, न था और न कभी होगा । सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यही है – 'परम धन राधा नाम अधार ।' इसी प्रकार राधासुधानिधि का श्लोक -१५४ भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है । जिसको अच्छा लगे, इसका अर्थ समझते हुए इस श्लोक को रट लो ।

# बाबाश्री की भाव-कथाएँ

**श्रीसखीशरणमहाराजजी द्वारा कथित बाबाश्री से सम्बन्धित कुछ विचारांश (२२ जनवरी, २००७)**

श्रीबाबामहाराज की माताजी ने रामेश्वर भगवान् से मनौती की थी कि हमारे कोई बेटा हो । रामेश्वर महादेवजी ने तब स्वप्न में माताजी से कहा कि तुम्हें पुत्र की प्राप्ति होगी । इसके बाद श्रीबाबा का जन्म हुआ । बाबा की एक बड़ी बहन श्रीदीदीजी थीं । जब श्रीबाबा का जन्म हुआ तो उनके माता-पिता श्रीरामेश्वर भगवान् के दर्शन के लिए उन्हें तमिलनाडु स्थित 'रामेश्वरम्' ले गये । वहाँ माताजी-पिताजी ने अपने बालक (श्रीबाबा) के साथ भोलेनाथ का पूजन किया ।

श्रीप्रयागराज में रहते हुए श्रीबाबा ने स्कूली शिक्षा प्राप्त की, 'प्रयाग विश्वविद्यालय' से स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की । 'प्रयाग संगीत समिति' से संगीत की 'प्रभाकर' डिग्री भी प्राप्त की । बचपन से ही श्रीबाबा की ब्रजवास करने की प्रबल इच्छा थी । वे कृपालुजी महाराज के सत्संग का लाभ लेने के लिए उनकी जन्मभूमि मनगढ़ भी जाया करते थे । वहाँ से भी भागकर श्रीबाबा 'बरसाना-गह्वरवन' में आ गये । कुछ दिनों बाद जब माताजी को श्रीबाबा के बारे में पता चला तो वह भी 'बरसाना' आ गयीं । जब श्रीमाताजी 'गह्वरवन' में आतीं तो उस समय 'श्रीबाबा' मानमन्दिर में रहते और जब माताजी उनसे मिलने के लिए मानमन्दिर आतीं तो श्रीबाबा 'बरसाने' चले जाते थे । माताजी को ब्रजवासियों से पता चलता कि बाबा तो यहाँ से भी चले गये और मान मन्दिर में नहीं हैं । श्रीबाबा के गुरुदेव श्रीप्रियाशरणजीमहाराज ने एक बार श्रीबाबा से कहा कि तू अपनी माँ को क्यों परेशान करता है ? वे तेरी जन्मदात्री माता हैं, उन्हें छोड़कर क्यों भागता-फिरता है, वे दुःखी होती हैं । गह्वरवन की अपनी कुटिया में माताजी को भी रख ले, वह भी भजन करेंगी । श्रीबाबा ने अपने गुरुदेव की आज्ञा का पालन किया और गह्वरवन की अपनी कुटिया में माताजी को रख लिया । प्रारम्भ में तो माताजी कई महीने गह्वरवन में रहकर फिर प्रयाग चली जाती थीं, क्योंकि उनकी भी जन्मभूमि प्रयाग में है । आगे चलकर श्रीबाबा ने माताजी से कहा कि आप भी अब अखण्ड ब्रजवास करो और प्रयाग मत जाया करो । माताजी ने बाबा की बात को मान लिया और अखण्ड ब्रजवास करने लगीं, प्रयाग के अपने मकान और सम्पत्ति का त्याग कर दिया । श्रीबाबा की दीदीजी कानपुर में बालिकाओं के डिग्री कॉलेज में प्रोफेसर के वरिष्ठ पद पर नियुक्त थीं । अपने पद से रिटायरमेंट (सेवा-निवृत्ति) होने पर श्रीदीदीजी भी श्रीबाबा के स्नेहवश यहाँ (बरसाना-गह्वरवन) आ गयीं । श्रीबाबामहाराज जब से ब्रज में आये, तब से अन्यत्र कहीं नहीं आये, ब्रज की सीमा के बाहर कहीं नहीं गये ।

**प्रश्न** – आप पहली बार श्रीबाबा महाराज से कहाँ मिले थे ?

**श्रीसखीशरणजीमहाराज** – श्रीबाबामहाराज तो सिद्ध पुरुष हैं । जब मैं ब्रज में पहली बार आया तो सिद्ध संतों की खोज किया करता था, मेरी इच्छा थी कि ऐसे महापुरुषों के पास मैं रहूँ, मुझे लगता कि ऐसे महापुरुषों की सेवा का अवसर तो मुझे कैसे मिलेगा, जो सिद्ध पुरुष हैं, जो श्रीजी-ठाकुरजी के साथ क्रीड़ा करते हैं, उनका दर्शन करते हैं, श्रीजी-ठाकुरजी जिनकी गोद में बैठते हैं, ऐसे सन्त-महापुरुष मुझको मिलने चाहिए । ब्रज में ऐसे महापुरुषों को मैं ढूँढा करता था । अंत में श्रीजी ने मेरी इच्छा पूरी की । एक ब्रजवासी स्वामी मुरारीलालजी, जो रास मण्डली के स्वामी थे, उनसे मेरा सम्पर्क हुआ तो उन्होंने मुझसे कहा – 'सखीशरण ! तुझे हमारे बाबा ने बुलाया है ।' मैंने पूछा कि वे कहाँ रहते हैं तो उन्होंने बताया कि वे मानगढ़, बरसाना में रहते हैं । मैंने कहा कि वे मुझे कैसे जानते हैं ? मुरारीलालजी बोले – 'अरे, वे सब कुछ जानते हैं । वे सिद्ध पुरुष हैं ।' श्रीबाबा के बारे में बताने के बाद फिर उन्होंने मुझे श्रीबाबा से मिलवाया, मुझे बाबाश्री की शरणागति मिली और मैं उनकी शरण में रहने लगा । मुझे यहाँ रहते ४२-४३ वर्ष हो गये और श्रीबाबा को ब्रजवास करते लगभग ५५ वर्ष हो चुके हैं । (यह इंटरव्यू २२ जनवरी, २००७ का है)

उन दिनों कमई-करहला गाँवों के बीच में मैंने कोसों तक फैला एक जंगल देखा । मेरा विचार हुआ कि जंगल में रहकर भजन करूँ । इसके लिए मैंने श्रीबाबा महाराज से आज्ञा माँगी तो उन्होंने मुझे आज्ञा दे दी और कहा –

'जाओ, वहाँ भजन करो और प्रतिदिन वहाँ से दौड़ लगाकर यहाँ गह्वरवन, बरसाना आया करो । दिन भर यहाँ रहो और रात को करहला में रहो ।' श्रीबाबा की आज्ञा का पालन करते हुए मैं प्रतिदिन सुबह ४ बजे उठकर, दौड़ लगाते हुए सूर्योदय के पहले ही बरसाना आ जाता था और शाम को सूर्यास्त के समय श्रीजी के दर्शन करते हुए, दौड़ लगाकर करहला चला जाता था । मैं करहला के जंगल में एक कुटी में रहता था । रात को आठ बजे तक भिक्षा के समय, जब लोग भोजन करते थे, मैं करहला पहुँच जाता था । बरसाने से दौड़ लगाकर जाता था तो आधे घंटे में करहला पहुँच जाता था । बरसाना से करहला दो कोस अर्थात् छः किलोमीटर दूर है । दो कोस सुबह दौड़कर आना और दो कोस शाम को दौड़कर जाना, यह मेरी नित्य की क्रिया थी । श्रीजी की कृपा से इससे मुझे बहुत लाभ हुआ । जब मैं करहला के जंगल में रात को भजन करने बैठता तो कोई मेरी पीठ पर हाथ फिराया करता था तो मैंने विचार किया कि ये ठाकुरजी हैं, जो मेरी पीठ पर हाथ घुमाकर मुझे शाबासी देते हैं कि बेटा ! खूब भजन किये जा । मुझे किसी प्रकार का भय नहीं लगता था । इस बारे में मैंने श्रीबाबा को भी कुछ नहीं बताया । एक दिन मैंने शरीर पर हाथ फेरने वाले को कुछ उलटी-सीधी बातें सुनायीं कि तुम कौन हो, जो मेरे शरीर पर हाथ घुमाते हो । उस समय कोई बोला नहीं । उस दिन जब मैं लेट गया तो मैंने सोचा कि मुख खोलकर नहीं सोना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि कोई मेरी आँखों के बाल नोच ले । उस समय भी मैं तो कम्बल ओढ़कर लेटा था किन्तु मेरे शरीर पर कोई हाथ फिराता रहा, तब मैंने उससे कहा – 'अरे, क्या करते हो ? मेरे भजन में बाधा क्यों उत्पन्न करते हो ? ऐसा लगता है कि तुम कोई सन्त हो । कुछ भी तुम हो लेकिन मेरे शरीर पर हाथ मत घुमाओ । तुम भजन करो और मुझे भी करने दो ।' उसने हाथ घुमाना बन्द नहीं किया । थोड़ी देर में उसने मेरी एक आँख के बाल पकड़कर नोच लिये । बाल तो नहीं नुच पाए किन्तु मुझे दर्द का अनुभव तो हुआ ही । मैंने उससे कहा – 'यार ! तू बहुत बदमाश है ।' बरसाना आकर मैंने श्रीबाबा को इस घटना के बारे में बताया । श्रीबाबा ने मुझसे कहा – 'अरे, तुमने इस बारे में मुझे अब तक क्यों नहीं बताया ?' मैंने कहा – 'महाराजजी ! आठ महीने हो गये । मुझे डर नहीं लगता था, इसलिए आपको अब तक नहीं बताया लेकिन आज जब उसने आँख के बाल नोचे, इससे मुझे कष्ट हुआ तो आज आपको बताया ।' श्रीबाबा ने कहा – 'अच्छा तो अब तुम यहाँ (गह्वरवन में) आ जाओ और भविष्य में कोई तुम्हारे पास में आये तो मुझे बताना ।' मैंने कहा – 'ठीक है ।' जब मैं भोजन करके शाम को गह्वरवन में कुटी में लेट गया तो वह फिर से मेरे शरीर पर हाथ घुमाने लगा । मैंने बाबा से कहा – 'श्रीबाबा ! वह आ गया है और मेरे शरीर पर हाथ घुमा रहा है ।' श्रीबाबा ने उसे बड़े जोर से डाँटते हुए कहा – 'हट' । उस दिन से फिर मेरे पास कोई भूत-प्रेत नहीं आया ।

मानमन्दिर उस समय खण्डहर के रूप में पड़ा हुआ था अर्थात् यह जीर्ण-शीर्ण पुराना मन्दिर था । यहाँ साँप बहुत रहा करते थे । मैं और श्रीबाबामहाराज ही यहाँ रहते थे । 'पण्डित श्रीरामजीलालजी' उस समय बालक थे और वह पढ़ने के लिए विद्यालय जाया करते थे । शाम के समय वे महाराजजी के पास ही रहा करते थे । इस तरह मैं, पण्डितजी और श्रीबाबामहाराज – ये तीन ही मानमन्दिर में रहा करते थे । बहुत दिनों के बाद ब्रजवासियों के बच्चे मानमन्दिर में जाने लगे और वहाँ उनकी पढ़ाई-लिखाई होने लगी । रात को मन्दिर में बहुत घोर (जोरदार ढंग से) संकीर्तन होता था । रात बारह बजे तक संकीर्तन के साथ नृत्य होता था । कीर्तन में तीन ढोलकें बजती थीं । श्रीबाबा महाराज बताते हैं कि पहले जब मानमन्दिर खण्डहर के रूप में था तो वहाँ भूत-प्रेत बहुत रहा करते थे । कभी-कभी मुझे भी भूत-प्रेतों का अनुभव होता था । सपने में भूत-प्रेत मेरे पाँव दबाया करते थे । जब मैंने श्रीबाबा को इस बारे में बताया तो वे हँसने लगे और उन्होंने ब्रजवासियों को बताया – 'अरे, सखीशरण के तो भूत-प्रेत भी पाँव दबाते हैं ।' मुझे अन्य किसी भी प्रकार की परेशानी मानमन्दिर में कभी नहीं हुई । सर्प तो मानमन्दिर में सैकड़ों रहा करते थे, खण्डहर के छेदों में जगह-जगह घुसे रहते थे किन्तु जब से श्रीबाबामहाराज ने संकीर्तन शुरू किया, उसके प्रभाव से वे सब पलायन कर गये । जितनी भी तमोगुणी शक्तियाँ, तमोगुणी प्राणी थे; वे सब भाग गये,

भूत-प्रेतों का भी पता नहीं पड़ा । सैकड़ों ब्रजवासी मानमन्दिर में आकर श्रीबाबा द्वारा चलाये गये संकीर्तन में सहयोग करते थे, नृत्य करते थे । उस कीर्तन में तीन ढोलकें बजती थीं, कई बेला, घड़ावल और नक्कड़िया बजाये जाते थे । इस तरह बहुत ही घोर संकीर्तन होता था । उस समय दूसरे ही तरह का माहौल (संकीर्तनमय वातावरण) था । अब भी घोर संकीर्तन होता है लेकिन उस समय तीन ढोलकें बजायी जाती थीं और ब्रजवासी बड़े ही उत्साह के साथ नृत्य किया करते थे । श्रीबाबा महाराज के गुरुदेव श्रीप्रियाशरणजी महाराज प्रतिदिन टहलते हुए यहाँ आया करते थे और श्रीबाबा से बात करते थे । उस समय श्रीबाबा संस्कृत की परीक्षा-शास्त्री के लिए अध्ययन कर रहे थे । इस कारण से 'श्रीप्रियाशरणजीमहाराज' श्रीबाबा से नाराज रहते थे । वे श्रीबाबा से कहते थे कि तू पहले संस्कृत पढ़ेगा, फिर भागवत की कथा करेगा, पैसा कमायेगा, इसके लिए ब्रज के बाहर जाएगा तो फिर कैसे तेरा भजन होगा और कैसे अखण्ड ब्रजवास हो पायेगा ? श्रीबड़ेबाबामहाराज के द्वारा ऐसा कहे जाने पर भी श्रीबाबा ने संस्कृत का अध्ययन नहीं छोड़ा तो बड़ेबाबामहाराज ने श्रीबाबा से बात करना बन्द कर दिया । वे गह्वरवन में आते, बैठ जाते तो श्रीबाबा उनको दण्डवत प्रणाम करके चले जाते थे । एक दिन श्रीबाबा ने मुझसे कहा – 'सखीशरण ! तुम जाओ और श्रीबड़ेबाबामहाराज को प्रसन्न कर लो । उनसे कहना कि बाबा तो संस्कृत के ग्रन्थों को पढ़ने-समझने के लिए ही संस्कृत का अध्ययन कर रहे हैं, शास्त्री की परीक्षा के लिए तैयारी कर रहे हैं । ब्रज के बाहर जाने और पैसा कमाने का उनका कोई लक्ष्य नहीं है ।' श्रीबाबा के ऐसा कहने पर मैंने श्रीबड़ेबाबामहाराज से प्रार्थना की, उनसे कहा – 'श्रीबड़ेबाबामहाराजजी ! आप श्रीबाबा के ऊपर कृपा कीजिये और उनसे बोलिए । उनका लक्ष्य तो संस्कृत के ग्रन्थों को समझना है, इसीलिए वे संस्कृत का विशेष अध्ययन कर रहे हैं । मेरी प्रार्थना है कि आप कृपा करके उनसे बोलिए ।' मेरे ऐसा कहने के बाद पीछे से श्रीबाबा अपने गुरुदेव के पास पहुँच गये तो तुरन्त ही वे श्रीबाबा से बोलने लग गये और फिर दोनों की बातचीत प्रारम्भ हो गयी तो मैंने कहा – 'वाह भई वाह ।' उसके बाद फिर दोनों ही प्रतिदिन एक-दूसरे से बात करने लगे ।

श्रीबड़ेबाबामहाराज अपने रहने की जगह प्रायः बदलते रहते थे, कभी वृन्दावन में रहते, कभी बहुत दिनों तक लगभग पाँच-छः महीने बरसाना में रहते और कभी गोवर्धन में रहा करते थे । गोवर्धन में एक बालिका (श्रीबाबा की सत्संगी विद्याजी की बहिन) रहती थी । वह कॉलेज में लेक्चरर थी । उसने एक बार श्रीबाबा से गोवर्धन में श्रीमद्भागवत सप्ताह कथा करने के लिए प्रार्थना की । उसकी प्रार्थना को स्वीकार करके श्रीबाबा ने गोवर्धन में भागवत सप्ताह कथा कही । उस कथा में पैसा बहुत चढ़ाया गया किन्तु श्रीबाबा ने एक भी पैसा नहीं लिया । पिछले साल की ब्रजयात्रा में वह श्रीबाबा से प्रार्थना करके उन्हें अपने घर भी ले गयी थी । श्रीबाबा ने तो उसके द्वारा आयोजित श्रीमद्भागवत सप्ताह कथा में एक भी पैसा नहीं लिया । कथा के बाद श्रीबाबा अपने गुरुदेव श्रीबड़े बाबा महाराज के पास गये और उनसे कहा – 'बाबा ! मैंने कथा भी कही परन्तु पैसा एक भी नहीं लिया । इससे आप समझ लीजिये कि मैंने कथा के लिए (कथा के माध्यम से धन का अर्जन करने के लिए) संस्कृत का अध्ययन नहीं किया है ।' श्रीबाबा की बात सुनकर श्रीबड़े बाबा महाराज बहुत प्रसन्न हुए, उन्होंने कहा – 'अच्छा-अच्छा' और फिर उन्होंने अपने गले की फूलों की माला उतारकर श्रीबाबा को पहना दी । श्रीबड़े बाबा महाराज तो सिद्ध कोटि के विलक्षण महापुरुष थे और श्रीबाबा महाराज भी सिद्ध संत हैं ।

**गौ–सेवकों की जिज्ञासा पर माताजी गौशाला का Account number**

**दिया जा रहा है –**

**SHRI MATAJI GAUSHALA,**
**GAHVARVAN,BARSANA, MATHURA**
**Bank – Axis Bank Ltd ,**
**A/C – 915010000494364**
**IFSC – UTIB0001058**
**BRANCH – KOSI KALAN,**
**MOB. NO. – 9927916699**

# संकीर्तन का चमत्कार

संत श्रीसखीशरणजी द्वारा कथित (२६ जनवरी, २००७) घटनाएँ

पहले मैं सिद्ध पुरुषों को ढूँढा करता था और सोचता था कि कोई ऐसे सिद्ध पुरुष मिलें, जिनकी गोद में प्रिया-प्रियतम विराजते हों तो मैं उनके दर्शन कर लिया करूँ, उनकी सेवा तो कहाँ मिलेगी ? श्रीजी इच्छा पूरी करती हैं । एक बार कोई ब्रजवासी, जिनका नाम था श्रीस्वामी मुरारीलालजी, जो चिकसौली गाँव के रहने वाले थे, रास मण्डली के स्वामी थे, रासलीला का अभिनय करवाते थे, उन्होंने मुझसे कहा – 'हमारे बाबा (गुरूजी) ने तुझको बुलवाया है ।' मैंने कहा कि वे मुझे कैसे जानते हैं ? मुरारीलालजी बोले – 'अरे, वे तो सिद्ध पुरुष हैं, वे सब कुछ जानते हैं ।' वे ब्रजवासी मुझको यहाँ ले आये और गह्वर वन में श्रीबाबा के पास रख दिया । श्रीबाबा ने मुझसे कहा – 'मैंने तुझे इसलिए बुलाया है कि तू कहाँ डोल रहा है ? अब यहीं मेरे पास आ जा, यहीं रह ।' दिन भर मैं श्रीबाबा के पास रहा, शाम को उन्होंने मुझसे कहा – 'जा, किसी लता-पता में सो जाना ।' मैंने कहा – 'ठीक है ।' मुझे लता-पता बड़ी प्यारी लगती थी और लता-पता के नीचे ही मैं प्रतिदिन सोता था । वृन्दावन में या कहीं भी मैं किसी के आश्रम में नहीं जाता था । मैं वृन्दावन में यमुना-किनारे यमुना की रेत में अथवा पेड़ के नीचे लेटता था । मैंने विचार किया कि मुझे तो श्रीबाबा ने बड़ी अच्छी आज्ञा दी है कि लता-पता के नीचे जाकर सो जाना । लता-पता तो मुझे बड़ी प्यारी हैं । श्रीबाबा की आज्ञानुसार शाम को मैं किसी लता-वृक्ष के नीचे लेट गया लेकिन अचानक ही वर्षा की बूँदें गिरने लगीं । मैंने सोचा कि कुछ भी हो, बूँदें भले ही गिरती रहें लेकिन श्रीबाबा की आज्ञा का पालन तो मुझे करना ही है, मैं तो लता-वृक्ष के नीचे ही सोऊँगा किन्तु उसी समय बड़े जोर से पानी बरसने लगा । मैंने विचार किया – 'सखीशरण ! वर्षा के कारण तेरा शरीर भीग जायेगा, दूसरे वस्त्र भी नहीं हैं और सर्दी भी लगेगी । इसलिए वर्षा से बचने के लिए कहीं और छाया का आश्रय ले । इतनी ही देर तक श्रीबाबा की आज्ञा का पालन कर लिया, यही बहुत है ।' ऐसा विचार करके मैं साँकरी खोर की छतरी के नीचे बैठ गया । रात को मैंने विचार किया कि ये तो साँकरीखोर की सँकरी गली है । यहाँ ठाकुरजी-श्रीजी क्रीड़ा करते हैं । ठाकुरजी यहाँ गोपियों से दान माँगते हैं, इसलिए वे यहाँ आयेंगे तो मुझे उनका दर्शन होगा । रात भर मैं प्रतीक्षा करता रहा किन्तु ठाकुरजी नहीं आये । सबेरे कोई महात्मा आया तो मैंने सोचा कि साधु के वेष में ठाकुरजी आये हैं । पागलपन की एक स्थिति होती है तो इसी अवस्था में मैंने उस साधु को ठाकुरजी समझकर उसके चरण पकड़ लिए और कहा – 'आप तो ठाकुरजी हैं । अब मेरे ऊपर कृपा करो ।' रात का समय था । वह साधु भी ठाकुरजी को ढूँढ रहा था, वह भी दीवाना पागल था । उसने मेरे पाँव पकड़ लिए और बोला – 'अरे छलिया ! तुम मुझसे क्यों छल करते हो, मैं तो तुझको ही ढूँढ रहा था ।' ऐसा कहकर अब तो हम दोनों प्रेम से एक-दूसरे का गाढ़ आलिंगन करने लगे । बहुत देर हो गयी, लोग भी उधर से आने-जाने लगे, तब मैंने विचार किया कि यह ठाकुरजी नहीं हैं, ये तो कोई सन्त ही है । यदि यह ठाकुर होता तो यहाँ से भाग जाता ।

एक बार मैंने वृन्दावन में यमुना के किनारे लेटे हुए रात भर प्रतीक्षा किया कि ठाकुरजी आवें और सोचा कि एकान्त में ठाकुरजी मिलते हैं तो यहाँ मुझे उनके दर्शन होंगे । सारे ब्रजमण्डल में, वृन्दावन में, बरसाना, गह्वरवन में वे रास लीला करते हैं तो एकान्त में मुझे भी ठाकुरजी मिलेंगे । मैं रात को रोता रहा और ठाकुरजी को बुलाता रहा । वृन्दावन से दो-तीन किलोमीटर दूर यमुना-किनारे यमुनाजी की रेत पर मैं चला गया । अकस्मात् एक वृद्ध ब्रजवासी आ गया । उसे देखकर मैंने सोचा कि ओहो ! ठाकुरजी मनुष्य का रूप धारणकर मुझे दर्शन देने के लिए आ गये हैं लेकिन ये यहाँ साक्षात् कैसे प्रकट होंगे ? ठीक है, आज मैं इनको पकड़ूँगा । वह ब्रजवासी तो मेरे पास आकर बैठ गया, उसने मुझे प्रणाम किया । मैंने विचार किया कि ठाकुरजी को मुझे पकड़ना है । वह ब्रजवासी बोला – 'महाराजजी ! मेरी एक इच्छा पूरी कर दो ।' मैंने पूछा – 'क्या है ?' ब्रजवासी बोला – 'दड़ा बता दो ।' मैंने कहा – 'दड़ा क्या होता है ?' वह बोला – 'सट्टा बता दो ।' मैंने पूछा कि सट्टा क्या होता है तो वह बोला नम्बर बता

दो । मैंने कहा कि नम्बर क्या होता है तो ब्रजवासी बोला कि कुछ भी बता दो । मैंने विचार किया कि यह तो ब्रजभाषा नहीं है । मैंने तो कभी दड़ा, सट्टा, नम्बर के बारे में सुना नहीं था और यह होता है - जुआ का खेल । मैंने सोचा कि ये ठाकुरजी छलिया हैं, दड़ा, सट्टा और नम्बर तो बड़ी विचित्र भाषा है । ये तो ठाकुरजी हैं, इनको पकड़ो । मैंने धीरे-धीरे कहा – 'वाह महाराज, वाह महाराज, दड़ा-सट्टा-नम्बर' और ऐसा कहते हुए मैंने उस ब्रजवासी के पाँव पकड़ लिए और कहा कि आज भले ही मेरे प्राण छूट जाएँ किन्तु आज तुझको मैं छोड़ूँगा नहीं । ब्रजवासी ने मेरे बारे में समझा कि यह कोई पागल है । वह अपना शरीर मुझसे छुड़ाता किन्तु मैं छोड़ता नहीं था, मैं नौजवान था और वह बूढ़ा था । मैं उसको यमुना की ओर खींचता तो उस ब्रजवासी ने सोचा कि यह बाबा पागल है और मुझे यमुनाजी की ओर खींचकर, यमुना जल में डुबोकर मार डालेगा । अन्त में उसने अपने-आपको मेरी पकड़ से छुड़ा लिया और भाग गया । मैं उसके पीछे यह कहकर दौड़ने लगा कि 'अरे भाग गया, भाग गया ।' उस समय अँधेरा था, वह ब्रजवासी तो भाग गया लेकिन मैंने कहा – 'बाँह छुड़ाये जात हो, निबल जान के मोहि ।' मेरा तो उसके प्रति कृष्ण भाव ही था किन्तु कुछ दिनों के बाद मुझे पता पड़ गया कि दड़ा-सट्टा-नम्बर तो जुआ का खेल होता है । वे ठाकुरजी नहीं थे, वह तो ब्रजवासी ही था । इसके बाद मैं श्रीबाबा के पास आया । श्रीबाबामहाराज मानमन्दिर में विराजते और मैं नीचे रहता था । कभी-कभी मैं मानमन्दिर में श्रीबाबा के पास रहता था । मानमन्दिर के अन्दर नीचे मैं सोता और श्रीबाबामहाराज अट्टा पर सोते थे । पण्डितजी उस समय छोटे से बालक थे और विद्यालय में पढ़ने के लिए जाते थे; वे भी रात में श्रीबाबा के साथ सोते थे ।

उन दिनों मानमन्दिर में चोर बहुत आते थे । मानमन्दिर में जहाँन डाकू का अड्डा था । श्रीबाबा ने उसे मानमन्दिर से भगाया । बहुत से चोर ब्रजवासियों का समूह था, जहाँन चोर- डाकुओं का सरदार था । उसे मैंने देखा था । मानमन्दिर से जाने के बाद एक बार वह टाट पहनकर आया था । डकैती छोड़कर वह साधु बन गया था, टाट पहनकर आया था, केवल उसकी आँखें खुली रहती थीं । मानमन्दिर में वह कई दिनों तक रहा । उसने श्रीबाबा से प्रार्थना की – 'बाबा ! आप मुझे मानमन्दिर में रहने दीजिये । मैं पाँच सौ रुपये हर महीने दिया करूँगा ।' श्रीबाबा ने उससे कहा – 'जहान ! मैं तुझे यहाँ नहीं रहने दूँगा, पाँच सौ रुपये का लोभ मुझे क्यों दिखाता है ? सारी पृथ्वी की, तीनों लोकों की सम्पत्ति भी कुछ नहीं है । मैं तुझको मानमन्दिर में नहीं रहने दूँगा, तू कोई और जगह ढूँढ ले ।' श्रीबाबा के ऐसा कहने के बाद वह कुछ दिनों तक दानगढ़ के मन्दिर में रहा । वह कुछ विद्या (तान्त्रिक विद्या) जानता था । उस समय मानपुर में दो दल थे । एक दल तो मानमन्दिर के कीर्तन में आता था । पचास-साठ ब्रजवासी नृत्य-गान करते थे । रात को बारह-एक बजे तक कीर्तन होता था । तीन-तीन ढोलकें बजती थीं । घंटा-घड़ावल, नक्कारा और बेला आदि वाद्य बजाए जाते थे, जिनकी बहुत घमासान ध्वनि होती थी । कई कोस तक ध्वनि जाती थी । लोग बताते हैं कि कामां तक इन वाद्यों की आवाज सुनाई पड़ती थी । रास मण्डल पर श्रीबाबा और उनके चारों ओर ब्रजवासी नाचते थे । श्रीबाबा महाराज बहुत तीव्र गति से इतना अधिक नाचते थे कि उनके शरीर से जब पसीना निकलता तो आस-पास के लोग उनके पसीने से छिटक जाते थे । श्रीबाबामहाराज बहुत अधिक नृत्य करते थे । मानपुर गाँव के पहले दल के लोग तो इस तरह श्रीबाबा के साथ मानमन्दिर में कीर्तन किया करते थे और दूसरे दल के लोगों ने नकारात्मक बातें कहकर जहान डाकू (जो अब टाटम्बरी बाबा के रूप में रहता था) को श्रीबाबामहाराज के विरुद्ध कर दिया । विरोध में तो वह तभी हो गया था, जब श्रीबाबा ने उसको मानमन्दिर में रहने की अनुमति नहीं प्रदान की थी । उसने दानगढ़ में रहते समय, वहीं से श्रीबाबा और उनके कृपापात्र कीर्तन करने वाले भक्तों को मारने के लिए घात छोड़ी । एक प्रेतस-अभिचार (मूठमेल घात) होता है । कई दिनों तक आकाश में जलता हुआ वह मानपुर गाँव में प्रकाशजी के मकान के चारों ओर घूमा, फिर लौट गया और कई दिनों तक वह हमारे मानगढ़ पर घूमा । मैंने और मानमन्दिर में कीर्तन करने वाले सभी ब्रजवासियों ने उसे देखा । मानमन्दिर के आसपास

आकाश में चक्कर लगाकर वह घात लौट गयी । उसमें जलता हुआ प्रकाश होता है । तीन दिन तक वह घात लगातार श्रीप्रकाशजी के मकान के चारों ओर तथा श्रीबाबा के विरुद्ध मानमन्दिर के पास आयी । लोगों ने श्रीप्रकाशजी को और श्रीबाबामहाराज को मारने के लिए वह घात भिजवायी थी । बाद में विरोधी दल में ही आपसी फूट होने पर वहाँ से निकले एक व्यक्ति ने श्रीबाबामहाराज को बताया कि जहान (टाटम्बरी बाबा) ने आपको और प्रकाशजी को मारने के लिए कल घात छोड़ी थी लेकिन वह टाटम्बरी बाबा कह रहा था कि मानगढ़ वाला बाबा कुछ विद्या जानता है और उसके प्रभाव से मेरी छोड़ी हुई घात को वापस लौटा देता है । श्रीबाबा ने कहा कि मैं कुछ नहीं जानता हूँ । मेरे पास तो केवल कृष्ण नाम है, कृष्ण-कीर्तन के सामने आसुरी माया का कोई प्रभाव नहीं होता है । मानमन्दिर में भगवान् का कीर्तन होता है । हम लोग रात को बारह-एक बजे तक ब्रजवासियों के साथ कीर्तन करते हैं । प्रकाशजी के घर में भी उनकी पत्नी और उनके सभी बालक-बच्चे, बहुत-सी मातायें-बहनें कीर्तन करते हैं । 'भगवन्नाम' के आगे आसुरी माया का कोई बल काम नहीं कर पाता है ।

आगे चलकर टाटम्बरी बाबा (जहान डाकू) ने वृन्दावन में अपना आश्रम बनाया । आज भी वृन्दावन में उसका आश्रम है ।

# मानिनीश्री की मानलीला

**श्रीसखीशरणबाबा द्वारा कथित (२३ जनवरी, २००७) सरस लीला-कथा**

श्रीबाबामहाराज श्रीजी के धाम से आये हैं, श्रीजी ने उनको भक्ति के प्रचार के लिए भेजा है । वे श्रीजी की सहचरी हैं, उनका इतना परिचय ही बहुत है । इसी प्रकार श्रीहरिप्रिया सहचरी आज से पाँच सौ वर्ष पूर्व श्रीहरिव्यास देवाचार्यजी के रूप में प्रकट हुई । उनके चौदह हजार शिष्य थे । उन्होंने उत्तराखण्ड में कुल्लू देश तक श्रीराधाकृष्ण की भक्ति का प्रचार किया था ।

अब श्रीजी की बढ़िया-सी कथा सुनाता हूँ, जो तुम लोगों ने कभी सुनी नहीं होगी । मानलीला सुनाता हूँ, हमारे मानगढ़ की प्यारी-सी लीला है ।

एकबार गह्वरवन में श्रीराधारानी ने श्यामसुन्दर से कहा – 'प्यारे श्यामसुन्दर ! आज रात्रि की रासलीला हमारे गह्वरवन में ही होगी ।' प्राचीनकाल में गह्वरवन बहुत बड़ा था । अब तो वन कटकर उसके बहुत-से भूभाग पर कई खेत बन गये हैं । गह्वर वन अब थोड़ा ही रह गया है ।

राधारानी ने कहा – 'श्यामसुन्दर ! आज हम लोग गह्वरवन में रास क्रीड़ा करेंगे । तुम शाम को आ जाना ।' श्यामसुन्दर बोले – 'प्यारीजू ! मैं आ जाऊँगा ।' श्रीजी बोलीं – 'पक्का वादा करो ।' श्यामसुन्दर – 'हाँ, मेरी ओर से पक्का वादा है ।' ऐसा कहकर श्यामसुन्दर नन्दगाँव चले गये और जब शाम को अपना वादा निभाने के लिए वे नन्दगाँव से चले तो बीच में रीठौरा गाँव पड़ा । वहाँ की चन्द्रावली, गूजरी सखी थीं । चन्द्रावलीजी और उनकी सखियों ने देखा कि ठाकुरजी कहीं जा रहे हैं तो उन सबने ठाकुरजी को पकड़ लिया और फिर वे उनको अपने महल में ले गयीं । ठाकुरजी ने चन्द्रावली से प्रार्थना की – 'मुझे छोड़ दो । मेरा श्रीजी से वादा है, आज गह्वरवन में रास लीला होगी । श्रीजी ने मुझे गह्वरवन में आने को कहा है तो मुझे उनकी आज्ञा का पालन करना है ।'

चन्द्रावलीजी बोलीं – 'प्यारे श्यामसुन्दर ! आज तो मेरे महल में ही रासलीला खेलिये और हम सब सखियों को रासलीला का आनन्द प्रदान कीजिये ।'

अब तो 'ठाकुरजी' चन्द्रावलीजी और उनके साथ की गोपियों के प्रेम के कारण वहीं रुक गये । रीठौरा में ही महारासलीला हुई । संगीत की तीनों विधा नृत्य-गान-वाद्य की अद्भुत रसधारा प्रवाहित हुई । मृदंग-वीणा आदि अनेक वाद्य बजाये गये । सखियाँ संगीत कला में अत्यधिक पटु (कुशल, चतुर) हैं । इधर श्रीजी श्रृंगार करके गह्वरवन में अपनी सखियों के साथ रासलीला हेतु श्यामसुन्दर की प्रतीक्षा कर रही थीं कि कब श्यामसुन्दर पधारें और रास की क्रीड़ा प्रारम्भ हो । सारी रात प्रतीक्षा में बीत गयी, ठाकुरजी नहीं आये । जब ब्रह्ममुहूर्त की बेला हुई तो श्रीजी ने मान कर लिया । उन्होंने कहा – 'सखियो ! श्यामसुन्दर ऐसे तो कहीं रुक नहीं सकते हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि

किसी सखी ने उन्हें रोक लिया है । जाओ, तुम लोग उनका पता लगाओ और उनको पकड़कर यहाँ लाओ ।'

श्रीजी स्वयं तो रूठकर मानकुञ्ज में पधारीं । मान-कुञ्ज अर्थात् मान मन्दिर, यहाँ अनेक कुञ्जें हैं । वे दिव्य अलौकिक हैं । ऐसी कुञ्जें साधारण लोगों को नहीं दिखाई पड़ती हैं । सिद्ध पुरुष ही उन्हें देख सकते हैं । मणिमय कुञ्जें हैं, रत्नों की कुञ्जें हैं । मानमन्दिर में ऐसी मणिमय-रत्नजटित कुञ्जें हैं । इस गह्वरवन के दो स्वरूप हैं । एक तो इसका प्राकृत स्वरूप, जो हम लोगों को आँखों से दिखायी पड़ता है । दूसरा, गह्वरवन का चिन्मय स्वरूप है, जो इसके बाहरी दिखने वाले स्वरूप के भीतर है, जहाँ मणिमय महल हैं, मणिमय कुञ्जें हैं, मणियों के बहुत सुन्दर प्रकाशमान वृक्ष हैं । इनके पत्तों और फूलों से भी प्रकाश निकलता है । ये सभी वृक्ष चिन्मय कल्पवृक्ष हैं । ये अविनाशी हैं, इनका एक फूल भी कभी मुरझाता नहीं है, नष्ट होना तो दूर, ये कभी कुम्हलाते भी नहीं हैं । जैसे ठाकुर-श्रीजी को जब माला पहनाई जाती है और जब वह माला उतारी जाती है तो उसे सखियाँ पहन लेती हैं । सखियाँ जब दूसरी माला पहनती हैं तो पुरानी माला अन्तर्धान हो जाती है । इसीलिए नित्य धाम में कोई वस्तु विनष्ट नहीं होती है । वृन्दादेवी 'वृन्दावन' की शोभा का संवर्द्धन करती (बढ़ाती) रहती हैं, कुञ्जों का निर्माण करती हैं । श्रीराधारानी की प्रधान सखी श्रीवृन्दादेवी वृन्दावन धाम की अधिष्ठात्री देवी हैं । श्रीजी 'धाम' में जो भी लीला करना चाहती हैं तो वृन्दादेवी कुञ्जों-निकुंजों का सौन्दर्यीकरण बढ़ाती रहती हैं, लीला के अनुसार धाम का सौन्दर्य एकदम प्रकट हो जाता है ।

श्रीजी जहाँ मानलीला करती थीं, वहाँ मानकुञ्ज अलग था । अतः अब श्यामसुन्दर के गह्वरवन की रासलीला में न आने पर मानलीला करने के लिए श्रीजी मानकुञ्ज में प्रवेश कर गयीं । ललिताजी ने विचार किया कि नन्दगाँव और बरसाना के बीच में रीठौरा गाँव पड़ता है । 'चन्द्रावली' सखी ठाकुरजी की बड़ी प्रेमिणी हैं, हो सकता है कि वे वहीं हों । ऐसा विचार करके ललिताजी रीठौरा गाँव में चन्द्रावलीजी के महल में पहुँच गयीं । ललिताजी के मणिमय नूपुरों की ध्वनि बड़ी विलक्षण थी । उस ध्वनि को श्यामसुन्दर पहचानते थे । मणिमय नुपुर बहुत बजते हैं, उनकी ध्वनि बड़ी रसीली, बहुत मधुर होती है । ललिताजी के नूपुरों की छम-छम...छननन-झननन की रसमयी ध्वनि चन्द्रावलीजी के महल तक पहुँची । उस ध्वनि को चन्द्रावलीजी और श्यामसुन्दर दोनों ने सुना । श्यामसुन्दर जान गये कि ललिताजी आ रही हैं क्योंकि वे ललिताजी के नूपुरों की ध्वनि को पहचान गये । अब श्यामसुन्दर भागे तो उनके नूपुरों की ध्वनि उत्पन्न हुई, उसे ललिताजी पहचानती थीं । ललिताजी समझ गयीं कि श्यामसुन्दर यहीं हैं और भाग रहे हैं । श्यामसुन्दर भागकर एक कमरे में घुसकर एक कोने में छुपकर बैठ गये । पहले तो ललिताजी ने चन्द्रावलीजी के कमरे में प्रवेश किया । चन्द्रावलीजी ने शय्या से उतरकर ललिताजी को नमस्कार किया क्योंकि ललिताजी महासखी हैं । चन्द्रावलीजी ने ललिताजी को प्रणाम किया और बोलीं – 'आइये ललिताजी ! आपका स्वागत है ।' ललिताजी ने कहा – 'अरी सखी चन्द्रावलीजी ! क्या प्यारे श्यामसुन्दर यहाँ आये हैं ?' चन्द्रावलीजी झूठ बोल गयीं कि प्यारी ललिताजी ! यहाँ तो वे नहीं आये । ललिताजी – 'नहीं-नहीं, आये तो अवश्य हैं । तुम झूठ बोल रही हो ।' चन्द्रावलीजी – 'अरी ललिताजी ! मैं आपसे कैसे झूठ बोल सकती हूँ ? ठाकुरजी तो यहाँ आये ही नहीं हैं ।'

ललिताजी – 'यदि आये हुए हों तो ?' चन्द्रावलीजी – 'नहीं आये हैं, आपको मेरी बात पर विश्वास नहीं हो रहा है ।' ललिताजी मुस्कुराने लगीं और उन्होंने अपनी सखियों को सभी कमरों में भेज दिया तथा स्वयं उसी कमरे में पहुँच गयीं, जहाँ श्यामसुन्दर एक कोने में छिपकर बैठे थे । जब उन्होंने ललिताजी को देखा तो उठकर खड़े हो गये और मुस्कुराने लगे । ललिताजी ने कहा – 'अच्छा, अब छिपने से काम नहीं चलेगा । प्यारीजी रूठ गयी हैं । अब गह्वरवन चलो और जब आप उन्हें मनाओगे तो पता चलेगा ।' ललिताजी की सखियों ने श्यामसुन्दर को पकड़ लिया और बोलीं – 'चलिए, प्रियाजी के पास पधारिये ।' श्यामसुन्दर ने ललिताजी से कहा – 'प्रियाजी ने तो मान कर लिया है, अब वे कैसे मानेंगी ? मैंने चन्द्रावलीजी से कहा था कि मुझे जाने दो किन्तु उन्होंने मुझे पकड़ लिया और जाने नहीं दिया । आज तो मेरी आफत आ गयी ।' चन्द्रावलीजी

बोलीं – 'प्यारे श्यामसुन्दर ! घबराइये नहीं, आप पधारिये । मैं पीछे से आ रही हूँ । प्रियाजी ने मान कर लिया है तो मैं उन्हें चुटकियों में मना लूँगी ।' श्यामसुन्दर बोले – 'हाँ, प्रिय सखी चन्द्रावलीजी ! शीघ्र ही आओ ।' चन्द्रावलीजी बोलीं – 'हाँ, मैं श्रृंगार करके आ रही हूँ । आप पधारिये ।' ललिताजी 'श्यामसुन्दर' को पकड़कर बरसाने ले चलीं और उधर चन्द्रावलीजी श्रृंगार करने लगीं । गह्वरवन में जहाँ मानमन्दिर है, वहाँ मानकुञ्ज में ललिताजी श्यामसुन्दर को ले गयीं । ललिताजी ने उन्हें वहाँ छोड़ दिया और बोलीं – 'भीतर जाइए और प्यारीजू को मनाइए ।' दो सखियाँ सोने के बेंत लेकर मानकुञ्ज के द्वार पर खड़ी थीं । जब श्यामसुन्दर वहाँ पहुँचे तो दोनों सखियों ने बेंत आड़े लगा दिए और बोलीं – 'श्यामसुन्दर ! कहाँ जा रहे हो ?' श्यामसुन्दर – 'अरी प्रिय सखी ! मैं राधिकारानी के दर्शन करूँगा । मुझे आज्ञा है न ?' सखियाँ – 'नहीं, प्रियाजी की आज्ञा नहीं है, तुम अन्दर नहीं जा सकते हो । मैं भीतर नहीं जाने दूँगी । तुम यहाँ से जाओ क्योंकि तुम अपराध करते हो ।' जब सखियों ने श्यामसुन्दर को मानकुञ्ज के भीतर नहीं जाने दिया तो ठाकुरजी हाथ जोड़कर बोले – 'अरी प्रिय सखियो ! मेरे ऊपर कृपा करो । यदि तुम लोग मुझे प्यारीजू के पास नहीं जाने देती हो तो उनके पास मेरा समाचार ही पहुँचा दो ।' एक सखी ने कहा – 'ठीक है, तुम्हारा समाचार पहुँचा दूँगी, बोलो क्या कहते हो ?' श्यामसुन्दर – 'प्रियाजू से कह दो कि प्यारे श्यामसुन्दर आये हैं, निकुंज द्वार पर खड़े हैं ।' सखी – 'ठीक है ।' सखी भीतर प्रियाजी के पास गयी और बोली – 'किशोरीजू की जय हो, वृषभानुनन्दिनी की सदा ही जय हो ।' श्रीजी ने पूछा – 'सखी ! क्या श्यामसुन्दर आये हैं ?' सखी – 'हाँ प्रियाजू ! प्यारे श्यामसुन्दर द्वार पर खड़े हैं, वे आपके दर्शन करना चाहते हैं । आपकी क्या आज्ञा है ?' श्रीजी – 'जाओ, उन्हें भीतर भेज दो ।' सखी लालजू के पास गयी और बोली – 'श्यामसुन्दर ! जल्दी भीतर जाइए, प्रियाजू की आज्ञा हो गयी है । आपका भाग्य खुल गया है । अब केवल उन्हें मनाना ही पड़ेगा और कुछ नहीं, अतः शीघ्र ही भीतर जाकर उन्हें मना लो ।' सखी की बात सुनकर श्यामसुन्दर शीघ्रता के साथ भीतर गये और श्रीजी के चरणों में अपना मस्तक रख दिया । श्रीजी फूल बिछे सिंहासन पर बैठी थीं । पुष्प जटित कुञ्ज, रत्नों का कुञ्ज था । जब श्यामसुन्दर ने श्रीजी के चरणों में अपना मस्तक रखा तो उन्होंने अपने चरणकमलों को झट से सिंहासन पर रख लिया और श्यामसुन्दर के मस्तक को हाथ से पकड़कर अलग कर दिया । अब तो ठाकुरजी खड़े हो गये और बोले – 'प्रियाजू ! मेरे अपराध को क्षमा कर दो । चन्द्रावलीजी और उनकी सखियों ने मुझको पकड रखा था और आपके पास यहाँ आने नहीं दिया ।' श्रीजी ने कहा – 'अजी, अब आप वहीं जाइये, जहाँ आपकी प्यारी चन्द्रावलीजी हैं । यहाँ हमारे पास आपको क्या काम है ? मैं आपकी प्यारी थोड़ी न हूँ, चन्द्रावलीजी प्यारी हैं, अतः आप अब वहीं जाइये ।' अब तो ठाकुरजी 'श्रीजी' को प्रसन्न करने के लिए वंशी बजाने लगे क्योंकि वंशी वे बहुत सुनती थीं और उसे सुनकर बहुत प्रसन्न होती थीं, इसलिए ठाकुरजी ने वंशी बजाना आरम्भ किया और वे वंशी में श्रीराधारानी का गुणगान करने लगे । श्रीजी ने वंशी छीनकर फेंक दी और बोलीं – 'ये तो तुम चन्द्रावलीजी को ही सुनाना ।' अब तो ठाकुरजी अपने मोरपंख के मुकुट से श्रीजी के शरीर पर बयार (पंखा) करने लगे । श्रीजी ने तुरन्त ही वह मोरपंख लेकर फेंक दिया, जो रत्नों से जटित था । श्रीजी ने कहा – 'ये बयार (मोरपंख से हवा) की सेवा तो अपनी चन्द्रावलीजी की ही करना ।' ठाकुरजी अपने पीताम्बर को श्रीजी के दिव्य अंग पर डुलाने लगे तो श्रीजी ने उनका पीताम्बर भी छीनकर फेंक दिया और बोलीं – 'पीताम्बर द्वारा सेवा अपनी प्यारी चन्द्रावली की ही करो ... जाओ पधारो ।' अब तो ठाकुरजी 'श्रीजी' को प्रसन्न करने के लिये चरणकमल का संवाहन करने (दबाने) लगे । श्रीजी ने उनको पकड़कर अलग कर दिया और कहा – 'जाकर चन्द्रावलीजी की सेवा करो ।' श्यामसुन्दर बोले – 'हे प्यारीजू ! आपको प्रसन्न करने में मुझे बहुत परिश्रम हो रहा है । मैंने राम अवतार ग्रहण किया था और रावण-कुम्भकर्ण आदि दैत्यों का संहार किया था, वहाँ भी मुझको इतना श्रम नहीं हुआ था । वाराह रूप धारण करके मैं रसातल से पृथ्वी को लेकर आया था, तब भी मुझको इतना श्रम नहीं हुआ था, जितना कि आपको मनाने में हो रहा है । मैंने नृसिंह

रूप धारण करके प्रह्लाद की रक्षा के लिए हिरण्यकशिपु दैत्य से युद्ध किया, उसका संहार किया, तब भी मुझे इतना श्रम नहीं हुआ, जैसा कि आज आपको मनाने में हो रहा है । हे प्यारी जू ! आप कृपा करके मान को छोड़ दीजिये ।' ऐसा कहकर श्यामसुन्दर ने चन्द्रावली के द्वारा निर्मित फूलों की माला, जिसमें बीच-बीच में रत्न और मणियाँ पिरोये हुए थे, श्रीजी के गले में पहना दी । श्रीजी उस माला को हाथ में लेकर बड़े ध्यान से देखने लगीं कि बड़ी सुन्दर माला बनी है किन्तु उन्होंने उस माला को अपने गले से उतारकर फेंक दिया और नन्दनन्दन से कहा – 'इस माला को तो तुम अपनी चन्द्रावली को ही पहनाना । देखो श्यामसुन्दर, मैंने तीन प्रतिज्ञा की हैं । जितने भी काले रंग वाले जीव होते हैं, वे कपटी होते हैं । तुम्हारा तन काला और मन भी काला है, तुम कपटी हो । तुमने मुझसे वादा किया था कि प्यारी जू ! रात को गह्वरवन के रास में अवश्य ही आऊँगा परन्तु तुमने धोखा दिया, आये नहीं । चन्द्रावली तुम्हारी बड़ी प्यारी थी, इसलिए तुम उसके पास चले गये । मैं तुम्हारी प्यारी नहीं थी, इसलिए मेरी तीन प्रतिज्ञा है – न तो मैं तुमको देखूँगी, न मैं तुमसे बोलूँगी और न ही तुम्हारा स्पर्श करूँगी । अतः यहाँ से शीघ्र ही चले जाओ ।' इस प्रकार कहके 'श्रीजी' ठाकुरजी की ओर पीठ करके मान की मुद्रा में बैठ गयीं । यद्यपि श्रीजी ने ठाकुरजी से चले जाने को कह दिया था, फिर भी वे गये नहीं, मानकुञ्ज में श्रीजी के सामने खड़े नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित करते हुए खड़े रहे । श्रीजी थोड़ी देर तो बैठी रहीं और फिर मुख को घुमाकर नेत्रों की कोरों से उनकी ओर देखने लगीं कि ये खड़े हैं अथवा चले गये । जब देखा कि सामने खड़े हैं तो झट से अपना मुख घुमा लिया । ऐसा उन्होंने कई बार किया और इस प्रकार से उनकी एक प्रतिज्ञा तो समाप्त हो गयी कि मैं श्यामसुन्दर को देखूँगी नहीं । उनकी दूसरी प्रतिज्ञा थी कि मैं नन्दलाल से बोलूँगी नहीं किन्तु वे कहने लगीं – 'अजी ! आप अभी तक गये नहीं, यहीं खड़े हुए हो ।' श्यामसुन्दर से बोल देने पर उनकी दूसरी प्रतिज्ञा भी भंग हो गयी । श्रीजी की प्रियतम के प्रति तीसरी प्रतिज्ञा थी कि मैं आपका स्पर्श भी कभी नहीं करूँगी परन्तु वे थोड़ी देर तो बैठी रहीं और जब देखा कि लालजी खड़े हैं, वहाँ से जा नहीं रहे हैं तो प्रियाजी अपने प्यारे के दोनों हाथ पकड़कर उन्हें मानकुञ्ज के बाहर कर आयीं और फिर सखियों ने उन्हें भीतर नहीं आने दिया । अब तो श्यामसुन्दर सखियों से कहने लगे कि प्रियाजी तो बहुत अधिक रूठी हुई हैं, अतः हे प्राणप्रिय सखियो ! अब तो आप लोग ही जाकर उन्हें मनाइये । बड़ी ही दीनता के साथ जब श्यामसुन्दर ने श्रीजी की सहचरियों से ऐसी प्रार्थना की, तब कभी तो बहुत-सी सखियाँ श्रीजी को मनाने के लिए जाती हैं और कभी एक ही सखी जाती है । तब तक ठाकुरजी मानगढ़ के पर्वत से नीचे गह्वरवन में आ जाते हैं और सखी को श्रीजी को मनाने हेतु ऊपर भेजते हैं किन्तु सखी ने ऊपर से आकर श्यामसुन्दर को जवाब दे दिया – 'लालजी ! आप अपराध करते हैं, इसीलिए प्यारीजू रूठ जाती हैं और फिर हमें उनको मनाना पड़ता है ।

**'मान मनावत हार परी री ।'**

आप दोनों प्रिया-प्रियतम ने मुझे चौगान की गेंद बना रखा है । आप ही प्रियाजू को मनाइये, मेरा सामर्थ्य नहीं है । उन्होंने तो ऐसा कठोर मान कर लिया है, जैसा पहले कभी नहीं किया था ।' इतने में ही वहाँ चन्द्रावलीजी आ गयीं । ठाकुरजी ने उनसे कहा – 'अरी चन्द्रावलीजी ! प्यारीजू रूठ गयी हैं, उन्होंने बहुत ही कठोर मान कर लिया है । मानकुञ्ज में शीघ्र ही जाकर उनको मनाओ ।' चन्द्रावली ने कहा – 'अरे श्यामसुन्दर ! आप चिन्ता मत करो । मैं तो श्रीजी के पास जाकर चुटकियों में ही उन्हें मना लूँगी ।' ऐसा कहकर चन्द्रावलीजी तीव्र गति से मानकुञ्ज में पहुँच गयीं और उन्होंने श्रीजी के चरणकमलों में अपना मस्तक रख दिया और श्रीजी के सामने अपनी साड़ी का अंचल फैलाकर भिक्षा माँगने लगीं – 'हे प्रियाजी ! लालजी को तो मैंने अपने महल में रोक लिया था, इसलिए वे अपने वचन को नहीं निभा सके, समय पर रास-क्रीड़ा हेतु आज रात्रि आपके पास गह्वरवन में नहीं आ सके, यह तो मेरा अपराध है, लालजी का इसमें कोई दोष नहीं है, फिर आप उन्हें क्यों दण्ड देती हैं ? मुझे आप दण्ड दीजिये । दण्ड की पात्र तो मैं हूँ । लालजी को आप दण्ड मत दो, वे बेचारे बाहर खड़े हुए रो रहे हैं । आप उनको परशान मत कीजिये । उनके बदले आप मुझे दण्ड दीजिये । आप जो भी दण्ड देंगी, वह

मुझे स्वीकार है । कृपा करके आप अपने कठोर मान को छोड़ दीजिये । मैं आँचल पसारकर आपकी प्रसन्नता की भिक्षा माँग रही हूँ ।' चन्द्रावली की बात सुनकर श्रीजी ने कहा – **'दौरी-दौरी आवत मोहि को मनावत,**
**हौं कहा दामन मोल लई री ।'**

'अरी सखी ! क्या तूने पैसा खर्च करके मुझे खरीद लिया है, जो मैं तेरी बात मानूँ । मैं तेरी बात नहीं मानूँगी ।

**अँचरा पसार के मोहि कूँ खिजावत,**
**हौं कहा तेरे बाबा की चेरी भई री ।**

क्या मैं तेरे बाप की नौकरानी हूँ, जो तेरी बात को मान लूँ । तूने कोई पैसा देकर मुझे ख़रीदा है, जो मैं तेरी बात को मानूँ ।

**जा री जा सखी भवन अपने, सौ बातन की एक कही री ।**
**'नंददास' प्रभु वे ही क्यों न आवत,**
**उनके पाँयन कहा मेंहदी दई री ॥**

अरी सखी चन्द्रावली ! श्यामसुन्दर के पाँवों में कोई मेंहदी थोड़े ही लगी है । वे तुझे क्यों भेजते हैं, स्वयं क्यों नहीं आते हैं ? अब उन्हें ही आकर मुझे मनाना चाहिए, मैं भी तो देखूँ कि कैसे मुझे मनाते हैं । लाख बातों की एक ही बात है कि अब तू यहाँ से चली जा । तू मुझे मनाने नहीं, खिजाने के लिए आयी है ।'

प्रिया जू के इस कठोर वचन को सुनकर तो चन्द्रावली भी घबरा गयीं और श्रीजी के पास से चलकर श्यामसुन्दर के पास आयीं और कहने लगीं – 'प्यारे श्यामसुन्दर ! प्रियाजी का ऐसा कठोर मान तो मैंने आज तक कभी नहीं देखा । अब तो कृपा करके आप ही उन्हें मनाओ, मैं तो उनको नहीं मना सकी ।' अब श्यामसुन्दर ने श्रीजी को मनाने के लिए बड़ी सुन्दर लीला रची । उन्होंने सोचा कि श्रीजी को मोर बहुत प्रिय हैं तो उन्होंने मोर का वेष बनाया, मोर के पंख अपनी पीठ के पीछे बाँध लिए और मानमन्दिर के सामने के पर्वत (मोर कुटी) पर श्रीजी को प्रसन्न करने के लिए नृत्य करने लगे । उन्होंने वहाँ और भी बहुत-से मोर बुला लिए । श्यामसुन्दर की टेर सुनकर बहुत-से मोर वहाँ आ गये । श्यामसुन्दर के चारों ओर मण्डलाकार बहुत-से मोर नृत्य करने लगे, उनके मध्य में ठाकुरजी मोर बनकर नृत्य करने लगे । श्यामसुन्दर धीरे-धीरे वंशी भी बजाने लगे । श्रीजी की दृष्टि सामने मोर कुटी पर पड़ी । ललिताजी ने भी देखा तो उन्होंने श्रीजी से कहा – 'सामने वाले पर्वत की चोटी पर मोर बहुत सुन्दर नृत्य कर रहे हैं । प्रिया जू देखो ! उनके बीच में तो एक मोर बहुत ही सुन्दर नृत्य कर रहा है, कितने सुन्दर ढंग से गोल-गोल घूम रहा है । जितने भी मोर वहाँ नृत्य कर रहे हैं, सभी प्रिय लग रहे हैं किन्तु बीच वाला मोर मुझे बहुत अधिक प्यारा लग रहा है ।' श्रीजी ने कहा – 'अरी ललिता ! इस बीच वाले मोर को पकड़ो । उसे पकड़कर मैं अपने महल में ले जाऊँगी । उसका नृत्य देखा करूँगी । उसको मोदक (लड्डू) और मेवा खिलाया करूँगी । वास्तव में, यह मोर मुझे बहुत प्रिय लग रहा है ।' ललिताजी ने कहा – 'हाँ प्रियाजी ! यह मोर ऐसा ही है, आपके प्यार करने योग्य है । हे लाड़ली ! आप उस पर्वत पर पधारो और उस मोर को मैं पकड़ूँगी किन्तु एक बात बताऊँ प्रियाजी ! यह मोर नहीं है । ये तो श्यामसुन्दर हैं, आपको प्रसन्न करने के लिए ये मोर बनकर नृत्य कर रहे हैं ।' श्रीजी अत्यन्त आश्चर्यचकित होकर बोलीं – 'अच्छा, मुझे प्रसन्न करने के लिए लालजी इतना कष्ट उठा रहे हैं कि मोर बनकर नाच रहे हैं ।' ललिताजी बोलीं – 'हाँ ।' श्रीजी – 'अरे, चलो-चलो, उस पर्वत पर चलें ।' जब श्रीजी मोरकुटी के पर्वत पर चढ़कर गयीं तो उन्होंने देखा कि वहाँ ठाकुरजी मोर बनकर बहुत से मोरों के साथ नृत्य कर रहे हैं । मयूरलीला के सन्दर्भ में ललिता सखी के अवतार स्वामी हरिदासजी का पद है –

**नाचत मोरनि संग स्याम मुदित स्यामाहि रिझावत ।**
**तैसिय श्याम घटा निशिकारी,**
**तैसोई बिजुरी कौंध दीप दिखावत ॥**
**तैसी ये कोकिला अलापत पपीहा देत सुर,**
**तैसोई मेघ गरज मृदंग बजावत ।**
**श्रीहरिदास के स्वामी श्यामा कुंजबिहारी,**
**रीझि राधे हँसि कंठ लगावत ॥**

जब ठाकुरजी मयूर बनकर नृत्य करने लगे तो उनकी इच्छा से आकाश में बादल आ गये और गरजने लगे यानी मृदंग बजाने लगे । पपीहा मधुर स्वर से बोलने लगे, कोकिला भी मीठे स्वर से गाने लगी । ऐसा प्रतीत होता है कि पपीहा और कोयल ठाकुरजी के नृत्य में अपने सुर मिला मिला रहे

हैं । ये देखकर श्रीजी अत्यधिक प्रसन्न हो गयीं और ठाकुरजी को प्रेम से गले लगा लिया, उनसे कहने लगीं – 'अरे वाह श्यामसुन्दर ! आज तो आपने बहुत सुन्दर मयूर-नृत्य किया है । ऐसा उत्कृष्ट नृत्य तो मैंने आज तक कभी नहीं देखा । अभी और नाचिये, आपका मयूर नृत्य मुझे अतिशय प्रिय लग रहा है ।' श्रीजी के प्रेमपूर्ण वचन सुनकर उनकी प्रसन्नता के लिए श्यामसुन्दर उत्साह से भरकर और अधिक कलापूर्ण मयूर नृत्य करने लगे, खूब फिरकैया लेने लगे । श्रीजी ने ललिताजी से कहा – 'अरी ललिताजी ! जल्दी से मोदक (लड्डू) लेकर आओ । मैं अपने हाथ से इस मोर को खिलाऊँगी ।' ललिताजी तुरन्त ही लड्डू लेकर आयीं और श्रीजी मोर बने श्यामसुन्दर को बड़े प्रेम से खिलाने लगीं । श्यामसुन्दर तो प्रेमानन्द से परिपूर्ण होकर श्रीजी के हाथ से दिया हुआ मोदक भी खाने लगे और साथ ही साथ बहुत बढ़िया नृत्यकला का भी प्रदर्शन करने लगे । इस प्रकार मानमन्दिर की मानलीला और मोरकुटी की मयूर-नृत्य-लीला का यथा सामर्थ्य वर्णन किया गया ।

# श्रीसंत-सन्निधि का संप्रभाव

**बाबाश्री के बारे में श्रीमार्कण्डेयप्रसाद शुक्लजी (जनवरी २०२२) की भावनाएँ**

वास्तव में शायद श्रीठाकुरजी का कोई विशेष आशीर्वाद ही रहा होगा, मेरे पितृव्य (चाचाजी) श्रीकाशीनाथजी शुक्ल यहाँ बरसाना में गाजीपुर की संस्कृत पाठशाला में अध्यापक थे । वे बड़े ही शान्त व्यक्ति थे । संस्कृत व्याकरण के अच्छे विद्वान् थे । उनके पास मेरे बड़े भाई साहब श्रीबालेश्वर शुक्लजी भी पढ़ा करते थे । बाद में श्रीबाबा महाराज को संस्कृत पढ़ने की जिज्ञासा हुई तो वे गाजीपुर की संस्कृत पाठशाला में पढ़ने के लिए जाने लगे थे । मेरे बड़े भाई साहब से भी श्रीबाबा की मित्रता थी । जब मेरे भाई साहब और संस्कृत पाठशाला के अध्यापक मेरे चाचाजी जून के महीने में छुट्टियों में बरसाना से अपने गाँव जाया करते थे तो वहाँ चाचाजी श्रीबाबा के बारे में बहुत चर्चा किया करते थे कि श्रीबाबा अत्यन्त ही तेजस्वी महात्मा हैं । चाचाजी बहुत विद्वान् थे, अतः वे श्रीबाबा के त्याग-वैराग्य को समझते थे । चाचाजी कहा करते थे कि मैंने अपने जीवन में इतना मेधावी व्यक्ति नहीं देखा और उसी कोटि का उनका वैराग्य भी था । चाचाजी इस बात से भी प्रभावित थे कि श्रीश्रीप्रियाशरणबाबा महाराज श्रीबाबा से बहुत स्नेह करते थे । चाचाजी की दृष्टि में यह कोई साधारण बात नहीं थी । मेरे घर में इस तरह श्रीबाबा की चर्चा प्रायः ही होती रहती थी । मैं उस समय छोटा ही था, कक्षा ६ में पढ़ता था । श्रीबाबा के बारे में अत्यधिक विशिष्ट चर्चायें सुनकर मेरे मन में उनके प्रति आकर्षण बढ़ता गया । स्नातक (बी.ए.) की शिक्षा पूरी करने के बाद डाक विभाग (post office) में मेरी नौकरी लग गयी और मेरी पोस्टिंग हरिद्वार में हुई । पोस्ट ऑफिस में आर.एम.एस. का एक अलग से अनुभाग होता है । उस अनुभाग में मैं था और इस कारण से मेरी ड्यूटी ट्रेन (रेलगाड़ी) में होती थी । रात को साढ़े नौ बजे हरिद्वार से ट्रेन आती थी और सुबह ७.२० पर दिल्ली पहुँच जाती थी । उसके बाद अगले दो दिन और एक रात का दिल्ली में विश्राम मिलता था, तदनन्तर हरिद्वार वापस ट्रेन में ही ड्यूटी करते हुए मैं जाता था । मुझे इस रूप में बड़ा अच्छा अवसर मिल गया, दो दिन और एक रात के विश्राम में मैंने विचार किया कि बरसाने चलकर श्रीबाबा का दर्शन करना चाहिए । बरसाना दिल्ली से कोई अधिक दूर तो था नहीं, अतः मैं यहाँ आ जाता था । यह सन् १९७८ की घटना है, तभी मैं श्री बाबा से पहली बार मिला था । उस समय मेरी आयु लगभग २६ वर्ष थी और मेरा विवाह हो चुका था । इस प्रकार तब एक बार तो मैं श्रीबाबा के पास आया और उसके बाद पुनः आता रहा । एक तो ब्रजभूमि में ही कोई विशिष्ट आकर्षण है और फिर श्रीबाबा का सानिध्य, अतः इस प्रकार से मेरा श्रीबाबा के पास आना-जाना बना रहा । श्रीबाबा के सत्संग का मुझे अभूतपूर्व लाभ मिलता रहा, उनके पास विशुद्ध सत्संग की चर्चा के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार की ग्राम्य चर्चा (सांसारिक बातचीत) तो कभी होती ही नहीं है । उन दिनों जब बाबा कोई भजन गाते तो गाते ही रहते थे । गह्वर वन की कुटी में रात को श्रीबाबा का पद गान होता था । वर्ष १९७८-७९ के सत्संग का लाभ मुझे प्राप्त हुआ और पद गान तो इसके भी पहले से हुआ करता था । उसमें

पण्डितजी, भइयाजी, उनके पिता श्रीप्रकाशजी, नृसिंह बाबा आदि थोड़े ही भक्त सम्मिलित होते थे । उस समय बड़ा ही शान्त सत्संग होता था । अधिक भीड़ नहीं होती थी । रात को ९ - ९.३० बजे तक पदगान होता था और शाम को कथा होती थी । एक बार मैंने श्रीबाबा से प्रार्थना की कि कोई गजल सुना दीजिये तो उन्होंने गजल गाई । बाबा महाराज पद गान में स्वरचित गजलें भी गाया करते थे । उनको गाने से कभी तृप्ति ही नहीं होती थी । यदि कोई उनके गायन के श्रवण का इच्छुक हो और सुनने के लिए बैठ जाए तो श्रीबाबा तो सारी रात ही गाते रहेंगे । भगवद्-गुणगान ही श्रीबाबा का भजन है, यही उनका जीवन है । रात्रि पद गान के बाद हम लोग श्री बाबा के साथ गह्वरवन से पर्वत की सीढ़ियों द्वारा मान मन्दिर जाते थे । उस समय आजकल की सी सीढ़ियाँ नहीं थीं, पत्थर की बनी, पुराने ज़माने की सीढ़ियाँ थीं । श्रीबाबा महाराज स्वयं मानगढ़ पर रहने वाले भक्तों के साथ सीढ़ियों से चढ़कर ही ऊपर जाया करते थे । उस समय श्रीबाबा की माताजी यहीं गह्वर वन की कुटी में रहा करती थीं । दीदीजी उस समय तक यहाँ नहीं आ पाई थीं । श्रीबाबा विशेषकर माताजी को सत्संग का लाभ देने के लिए, उनकी सेवा के लिए ही गह्वरवन की कुटी में कथा करते और पद गान किया करते थे परन्तु इसका लाभ तो सभी को प्राप्त होता था । श्रीबाबा इतने अधिक उदार हैं कि एक बार सर्दी के मौसम में कुटी में श्रीबाबा पद गा रहे थे और मैं बिना गर्म कपड़े के साधारण से ही वस्त्र पहने बैठा था, उस समय माताजी की खाट पर ऊनी चादर पड़ी थी तो श्रीबाबा इतने उदार हैं कि उन्होंने माताजी से कहा कि ये चादर शुक्लाजी को दे दीजिये, इनको ठण्ड लग रही होगी । माताजी ने प्रयाग की भाषा में कहा – 'हम न देवें काऊ को' अर्थात् 'मैं ये चादर किसी को नहीं दूँगी ।' श्रीबाबामहाराज तब एक ही चादर ओढ़कर बैठे थे तो उन्होंने अपनी चादर उतारकर मेरी तरफ फेंक दी । यह देखकर माताजी ने मुझसे कहा – 'अरे भइया ! उनका चादर दे दो, ये मेरी ही चादर तुम ले लो । ये (बाबा) तो जन्म से ही बहुत जिद्दी हैं ।' माताजी की बात सुनकर श्रीबाबा हँसने लगे, हम लोगों को बड़ा आनन्द आया । उस समय से (सन् १९७८ से १९९० तक) मेरा लगातार यहाँ श्रीबाबा के पास आना-जाना बना रहा । सन् १९९० से श्रीबाबा ने मुझसे कहना आरम्भ कर दिया कि तुम देवरिया में भागवत सप्ताह कथा करवाओ । श्रीबाबा तो महापुरुष हैं, मैं उनके अभिप्राय को नहीं समझ सका कि आगे वहाँ इतने बड़े स्तर पर प्रचार संस्था बन जायेगी और क्या-क्या हो जाएगा, किन्तु महापुरुषों को सब पता रहता है । श्रीबाबा मुझसे बराबर कहते रहे कि देवरिया में भागवत कथा का आयोजन करो लेकिन मेरा साहस नहीं होता था ।

यहाँ श्रीबाबा के सत्संग का तो लाभ मैं लेता ही था, साथ ही साथ श्रीसखीशरण महाराजजी के पीछे भी मैं बहुत लगा रहता था । आदरणीय पण्डितजी परिहास में मुझे चिढ़ाते हुए कहते थे कि तुम्हारे बाबा वहाँ बैठे हुए हैं । सखीशरणमहाराजजी गह्वरवन स्थित श्रीबाबा की कुटिया में रहा करते थे । वे श्रीबाबामहाराजजी की बहुत सेवा किया करते थे और जब मैं यहाँ रहता तो मैं उनकी सेवा किया करता था । इसके बाद फिर नित्यानन्दजी महाराज यहाँ आ गये । वे भी महापुरुष थे । मैं विचार करता था कि एक ही महापुरुष का दर्शन बड़ा दुर्लभ होता है किन्तु मुझे तो ब्रजभूमि में तीन महापुरुषों के दुर्लभ सानिध्य का लाभ उपलब्ध हो रहा है । यह मेरे लिए बहुत बड़ी बात थी, अतः भीतर से मेरे मन में बड़ी प्रसन्नता रहती थी ।

**प्रश्न** – आपको किन बातों से ये समझ में आया कि श्रीबाबा महाराज एक विशेष प्रकार के सन्त हैं और जिनका व्यक्तित्व अन्य सन्त-महापुरुषों से बिलकुल अलग हटकर है ।

**श्रीमार्कण्डेयजी** – मेरे चाचाजी, जो कि बरसाना के गाजीपुर संस्कृत विद्यालय के अध्यापक थे, वे बड़े ही शान्त स्वभाव के थे । अध्यापन कार्य के अतिरिक्त उन्हें जो भी समय मिलता था, उसे वे प्रायः भजन में ही व्यतीत किया करते थे । उन्होंने मुझे श्रीबाबा के बारे में जिस प्रकार की बातें बताई थीं, उसके कारण छोटी अवस्था से ही उनके प्रति लगाव हो गया था । मेरे भाई साहब भी श्रीबाबा महाराज के दिव्य गुणों की चर्चा किया करते थे । मेरे तो घर में ही बाबा महाराज की प्रशंसा, उनके गुणों का वर्णन मेरे सामने हुआ और यहाँ आने के बाद तो मैंने स्वयं भी

उन्हें देखा । उन दिनों भगवन्नाम में मेरी रुचि थी और मैं रामचरितमानस की इस चौपाई से बहुत प्रभावित रहा ।

**जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ ।**
**नाम जीहँ जपि जानहिं तेऊ ॥**

एक बार हम लोग देवरिया से यहाँ आये । मेरे साथ एक जोशीजी भी आये थे । सत्संग के बाद श्रीबाबामहाराज श्रीजी मन्दिर जा रहे थे ।

**प्रश्न** – क्या उस समय सत्संग के बाद श्रीबाबामहाराज श्रीजी मन्दिर भी जाया करते थे ?

**उत्तर** – प्रायः ही शाम का सत्संग समाप्त होने के बाद महाराजजी श्रीजी मन्दिर जाया करते थे । एक बार मैं और जोशीजी श्रीबाबा के पीछे-पीछे श्रीजी मन्दिर जा रहे थे । जोशीजी अधिक पढ़े-लिखे नहीं थे किन्तु सरल स्वभाव के पुरुष थे । वह गायत्री मन्त्र का जप बहुत करते थे । उन्होंने चलते समय ही श्रीबाबा से पूछा – 'महाराजजी ! भगवत्प्राप्ति का साधन क्या है ?' तुरन्त ही श्रीबाबा खड़े हो गये और मुड़कर हम लोगों की ओर देखते हुए उन्होंने कहा – 'जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ.....' मैं जिस चौपाई से प्रभावित था, मेरे बिना कहे ही श्रीबाबा ने उसी का उच्चारण किया और हम लोगों के मन में नाम-साधन को लेकर जो थोड़ा बहुत संशय था, उसे दूर करके विश्वास को दृढ़ कर दिया । इसी तरह एक बार मैं देवरिया से निश्चिन्त होकर आया था कि मैं बाबा से मन्त्र लूँगा, संयोग वश मेरे चाचा श्रीकाशीनाथजी भी साथ में थे । श्रीबाबा चाचाजी का बड़ा सम्मान करते थे, जब वे वृद्धावस्था में गाँव में रहने लगे थे तो बाबा ने मुझसे कई बार कहा कि उनसे (चाचाजी से) कह दो कि यहाँ मान मन्दिर में आ जाएँ । मुझे संतोष नहीं है, यह सोचकर कि घर में उनकी सेवा हो पाती होगी कि नहीं । यहाँ ले आओ, मैं स्वयं उनकी सेवा करूँगा । मैंने जब घर में चाचाजी को इस बारे में बताया तो उन्होंने वहीं धरती पर सिर झुका दिया और बोले कि श्रीबाबा महाराज से सेवा कौन लेगा ? वे कोई सामान्य व्यक्ति थोड़े ही हैं ।

**प्रश्न** – जब आपकी श्रीबाबा से भेंट होती थी तो उन दिनों श्रीबाबा की आयु लगभग क्या रही होगी ?

**उत्तर** – श्रीबाबा मुझसे आठ-नौ वर्ष बड़े हैं । उस समय तो वे बिल्कुल युवा ही थे । श्रीबाबा महाराज की रहनी-कहनी और उनके अन्दर जो तितिक्षा (सहनशीलता) थी, ये सभी लक्षण मानो दीवार पर स्पष्ट रूप से लिखी हुई इबारत की तरह थे, दिखाई देते थे । इसीलिए उनके प्रति मेरा भाव बढ़ता ही गया । मेरे पूरे जीवन में आज तक एक भी ऐसा प्रसंग नहीं आया, जो बाबा के प्रति विमुखता का कारण बने । यह बाबा की कृपा है । हम लोगों की तो आँख ही ऐसी है कि हर किसी में दोष ही दिखाई देता है लेकिन श्रीबाबा जैसे महापुरुष की कृपा है, वे जानते हैं कि यह अल्पज्ञ जीव है, ऐसा कुछ न हो कि इसकी श्रद्धा समाप्त हो जाए । अस्तु, बाबा के प्रति मेरी श्रद्धा बढ़ती गयी और उन्होंने मेरे साधन को पुष्ट कर दिया । जब मन्त्र देने के लिए मैंने कहा तो उन्होंने पण्डितजी से कहा कि इनको प्रसाद पवाओ । पण्डितजी रस मन्दिर से हम लोगों के लिए प्रसाद बनवाकर ऊपर मान मन्दिर पर ले आये । प्रसाद पवाने के बाद फिर श्रीबाबा ने मुझसे कहा – 'देखो, मैं किसी को मन्त्र नहीं देता हूँ ।' जबकि अभी तक उनसे मन्त्र देने के बारे में कोई चर्चा भी नहीं हुई थी, उसके पहले ही श्रीबाबा ने ऐसा कह दिया । मुझे तो यह सुनकर धक्का-सा लगा । मैंने अंग्रेजी में उनसे कहा – but I have only accepted. (लेकिन मैंने केवल स्वीकार कर लिया है) तो बाबा ने भी अंग्रेजी में कहा – you proceed, as you please. (तुम जैसा चाहो, करते रहो) । जब श्रीबाबा ने ऐसा कहा तो मैंने अपना मनपसन्द मन्त्र चुन लिया और अपने मन में यह मान लिया कि ये मन्त्र मुझे महाराजजी से मिला है । उसके बाद मैं नीचे गया तो देखा कि सखीशरणजीमहाराज के पैर में बहुत बड़ा फोड़ा हो गया था । वे रसमन्दिर में ऊपर के कमरे में मच्छरदानी लगाकर लेटे हुए थे । फोड़े से पककर मवाद बह रहा था । मेरे साथ जोशीजी भी थे । मैं बरसाने के बाजार में गया और वहाँ से दवा व पट्टी लेकर आया तथा सखीशरणमहाराजजी की सेवा करता रहा । आठ-दस दिन सेवा करते बीत गये, इस दौरान मैं श्रीबाबा के पास नहीं जा पाया । मैं और जोशीजी, दोनों मिलकर सखीशरणमहाराजजी की सेवा करते रहे । इसी अवधि में उन्होंने मुझसे कहा कि आप युगल मन्त्र का जप किया करो । इससे बहुत जल्दी आपको लाभ मिलेगा किन्तु मैंने तो श्रीबाबा के पास अपना मनपसन्द मन्त्र चुन लिया था,

सखीशरणमहाराज ने ज्यों ही कहा कि तुम युगल मन्त्र जपा करो तो मेरे मन में उथल-पुथल मच गयी । अब मैं अपना मन्त्र क्यों बदलूँ, मन्त्र बदलना चाहिए कि नहीं, यह जानने के लिए मैं रसमन्दिर से भागता हुआ मानमन्दिर में श्रीबाबा के पास गया । उस समय वे कुछ लिख रहे थे । उन्होंने मुझे अशान्त स्थिति में देखा तो पूछने लगे – 'क्या बात है ?' बाबा कभी भी दिन में सोते नहीं थे, उन्होंने दिन में एक क्षण को भी कभी विश्राम नहीं किया । मैंने उनसे कहा – 'बाबा ! सखीशरण महाराजजी कह रहे हैं कि युगल मन्त्र जपा करो । इससे शीघ्र ही लाभ होगा ।' श्रीबाबा बोले – 'हाँ, यही तो तुम्हारा मन्त्र है । यही तुम जपते हो न ?' मैंने कहा – 'हाँ, महाराजजी ।' श्रीबाबा ने कहा – 'क्या यह मन्त्र चिन्मय नहीं है ?' मैंने कहा – 'हाँ, मेरा विश्वास है कि यह चिन्मय मन्त्र है ।' श्रीबाबा – 'मन्त्र को बदलवाने की आवश्यकता नहीं है ।' इस घटना के बाद मुझे यह आभास हुआ कि मैं जो सोच रहा था कि मैंने मन्त्र अपनी रुचि के अनुसार श्रीबाबा से ले लिया है किन्तु श्रीसखीशरणजीमहाराज की प्रेरणा हुई युगल मन्त्र के जप की, नहीं तो बाबा को क्या पता कि इसने कोई और मन्त्र चुन लिया है । इससे मेरा यह विश्वास और बढ़ता गया कि हम जो कुछ भी कर रहे हैं, वह सब बाबा की दृष्टि के नीचे ही है और बाबा के द्वारा प्रदत्त है । उसमें मुझे शंका नहीं करना चाहिए । यह एक विशेष बात हुई और इसमें मैं श्रीसखीशरणमहाराजजी की कृपा भी मानता हूँ कि उन्होंने जो कहा था, उस मन्त्र की पुष्टि भी हो गयी ।

आपने पूछा कि बाबा में क्या विशेषता है तो श्रीमद्भागवत में प्रह्लादजी द्वारा कथित एक श्लोक है –

**प्रायेण देव मुनयः स्वविमुक्तिकामा**
**मौनं चरन्ति विजने न परार्थनिष्ठाः ।** (भा. ७/९/४४)

प्रह्लादजी नृसिंह भगवान् की स्तुति करते हुए कहते हैं –

हे देव ! प्रायः ऋषि-मुनि अपनी मुक्ति की कामना से किसी निर्जन वन में अपनी समस्त इन्द्रियों को विषयों से रोककर एकान्त साधना करते हैं किन्तु उनके अन्दर परार्थनिष्ठा अर्थात् परोपकार की भावना नहीं होती है । वे केवल अपने ही कल्याण के लिए कठोर साधना करते हैं किन्तु भवसागर में भटकते संसार के अन्य जीवों के कल्याण के लिए कोई प्रयास नहीं करते हैं ।

प्रह्लादजी ने ऐसे मुनियों को स्वार्थी कहा है, अपने बारे में वे कहते हैं कि जन्म-मरण के चक्र में पड़े इन दीन-हीन पतितात्माओं को छोड़कर मैं केवल अपनी मुक्ति नहीं चाहता हूँ । मैं चाहता हूँ कि अनादिकाल से भवबन्धन में पड़े इन जीवों को भी आपकी शरण मिल जाए, जिससे कि सदा-सर्वदा के लिए मंगल हो जाए । इसे कहते हैं परार्थनिष्ठा । श्रीबाबामहाराज की परार्थनिष्ठा, उनकी एक बहुत बड़ी विशेषता है । जब से वे ब्रज में आये हैं, तभी से उनका सारा जीवन, उनकी सारी साधना परोपकार हेतु, जीवों के कल्याण के लिए ही समर्पित रही है । उन्होंने अपने जीवन का एक क्षण भी कभी व्यर्थ नष्ट नहीं किया । हम जैसे जीवों को जागृत करने में, उनके उपकार हेतु ही वे सदा प्रयत्नशील रहे । कभी भी वे किसी से ग्राम्य चर्चा (सांसारिक बातें) नहीं करते । उनका रहन-सहन भी कोई विशेष नहीं, पूर्णतया सादा जीवन है, उच्च कोटि का उनका त्याग-वैराग्य है । निरन्तर भजन-आराधन करना और कराना – इसी पुनीत कार्य में श्रीबाबा सदा लगे रहे । ऐसा आदर्श जीवन तो आजकल कहीं देखने को नहीं मिलता है । अब बाबा की विशेषताओं को किन शब्दों में व्यक्त करूँ, वाणी से उनकी महिमा का वर्णन करना असम्भव ही है । उनके अलौकिक जीवन-चरित्र को देखते-देखते, कायाकल्प कर देने वाली उनकी ओजस्वी वाणी का श्रवण करते-करते मेरा मन उत्तरोत्तर उनके प्रति समर्पित होता चला गया । जब से श्रीबाबा ने देवरिया में भागवत कथा कराने के लिए कहा, उसके बाद श्रीनित्यानन्द महाराज ने तो यहाँ तक कह दिया कि मैं स्वयं देवरिया आऊँगा ।

**सरस मधुर वृषभानु लाड़िली ||**
**गहवर कुंजन केलि करत नित हरि की चित्त चाड़िली**
**मंदिर मान करति पिय चरननि लोटत मिलत माड़िली**
**कबहूँ कृपा करेंगी राधा आशा और छाड़िली ||**
-(पूज्यश्री बाबा महाराज कृत)

# निष्काम भावना से आराधन-शक्ति का प्राकट्य

**बाबाश्री के बारे में श्रीमार्कण्डेयप्रसाद शुक्लजी (जनवरी २०२२) की भावनाएँ**

**प्रश्न** – आपका श्रीबाबा के साथ अत्यन्त घनिष्ठ सम्पर्क रहा है तो उनके साथ व्यतीत हुआ कोई अत्यधिक महत्वपूर्ण यादगार पल अथवा कोई बहुत विशेष घटना, जिसका अनुभव आपने महाराजजी के सानिध्य में किया, उसे आप बताइए ।

**उत्तर** – श्रीबाबा के पास मैं प्रायः ही आता रहता था, वर्ष में दो-तीन बार तो अवश्य ही आया करता था । एक बार तो राधाष्टमी से आठ-दस दिन पहले ही मैं यहाँ आ गया था । उस समय एक दिन श्रीबाबा ने मुझसे पूछा कि तुम श्रीजी के समाज गान में चलोगे ? मैंने कहा – 'हाँ महाराजजी, अवश्य ही चलूँगा ।' मैं मान मन्दिर में जहाँ सोता था, श्रीबाबा अपने कमरे से उतरकर वहाँ आये और मुझसे कहा – 'तैयार हो ?' मैंने कहा – 'हाँ ।' मैं तो स्नान करके बहुत पहले से ही वहाँ बैठकर बाबामहाराज की प्रतीक्षा कर रहा था कि वे आते ही होंगे ।

**प्रश्न** – इससे पता चलता है कि श्रीबाबा श्रीजी के मन्दिर प्रायः जाया ही करते थे, विशेषकर राधाष्टमी के पूर्व के समाज गान में ?

**उत्तर** – राधाष्टमी वाले दिन तो नहीं किन्तु उसके पहले के समाज-गान में वे जाया करते थे । उसमें श्रीबाबा मृदंग बजाया करते थे और अकेले ही जाते थे, उनके साथ कोई नहीं जाता था । एक वर्ष ऐसा संयोग हुआ कि मुझे भी उनके साथ जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । लगभग १९८०-८५ के मध्य की यह घटना है । उस समय मैं यहाँ इतना अधिक आता था कि मेरे एक-दो महीने का वेतन भी नहीं मिलता था । यहाँ अधिक समय व्यतीत करने के कारण वेतन की कटौती हो जाती थी । उसी अवधि में मेरी पत्नी का भी देहान्त हो गया । उस समय मेरी आयु ३५ वर्ष थी । श्रीबाबा ने पत्नी की मृत्यु होने पर मुझसे कहा कि तुम्हारी भवबन्धन से आधी मुक्ति हो चुकी है, आधी अभी बाकी है । श्रीबाबा लागलपेट वाली बात कभी किसी से नहीं करते हैं, सच्ची बात कहते हैं । जो शास्त्र कहता है, उसी बात को श्रीबाबा भी कहते हैं । शास्त्र कहता है कि भगवान् के नाम में बहुत बड़ी शक्ति है, भगवन्नाम से कुछ भी हो सकता है किन्तु यह तो शास्त्र का सिद्धान्त है, परन्तु नाम के प्रभाव से इतनी बड़ी गौशाला, प्रति वर्ष पन्द्रह हजार से अधिक भक्तों को एक महीने से अधिक लम्बे समय तक निः शुल्क ब्रज यात्रा कराना, प्रतिदिन हजारों लोग निःशुल्क भोजन यहाँ करते हैं, यह नाम की शक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण है । बाबा कोई फैक्ट्री तो चलाते नहीं हैं, कोई व्यवसाय करते नहीं हैं, अपने पास एक पैसा कभी उन्होंने आज तक रखा नहीं, शास्त्र में नाम की महिमा के सिद्धान्त को, नाम की महिमा को व्यवहार में सबके सामने लाकर दिखा दिया है । इसे देखने वालों को नाम के प्रभाव को समझना चाहिए, हालाँकि यह तो कुछ भी नहीं है, नाम के प्रभाव से तो जीव को साक्षात् भगवत्प्राप्ति हो सकती है और बाबा तो हैं ही भगवत्प्राप्त महापुरुष । मेरे विचार से उन्होंने यहाँ जो भी ऐश्वर्य दिखाया है, इसलिए उसका प्रदर्शन किया है ताकि हम लोग भगवन्नाम कीर्तन की महिमा, उसके प्रभाव को समझ सकें । माताजी गोशाला हो अथवा मान मन्दिर सेवा संस्थान की ओर से जो भी कार्य हो रहे हैं, ये सब नाम कीर्तन का ही तो ऐश्वर्य है । इतने व्यापक स्तर पर सफलतापूर्वक हो रहे जन कल्याणकारी कार्यों और इससे जुड़े अपार वैभव के प्रदर्शन के पीछे श्रीबाबा का उद्देश्य यही है कि हम सबकी नाम कीर्तन के प्रति रुचि एवं निष्ठा बढ़े । बाबा के कुर्ते की जेब में पाँच पैसा भी नहीं रहता और फिर भी यहाँ इतने बड़े-बड़े काम हो रहे हैं, यह श्रीजी के नाम के प्रभाव से ही तो हो रहा है । नाम-कीर्तन की महिमा का प्रत्यक्ष प्रभाव यहाँ सभी देख सकते हैं । मान मन्दिर द्वारा सम्पादित कार्यों के ऐश्वर्य को देखकर नाम-कीर्तन के प्रति हमारी रुचि हो, नाम-कीर्तन का माहात्म्य हमारे मन-बुद्धि में प्रवेश करे, यही श्रीबाबा का मूल उद्देश्य है, ऐसा मेरी समझ में आता है ।

देवरिया (मेरी जन्म भूमि) में भागवत सप्ताह कथा का आयोजन करने की श्रीबाबा ने मुझे प्रेरणा दी, नित्यानन्द महाराज भी वहाँ जाने को तैयार हो गये । पहली बार जब वहाँ पण्डित श्रीरामजी लाल शर्माजी की भागवत कथा हुई तो चमत्कार ही हो गया । मेरे पास कथा हेतु धन की कोई

व्यवस्था नहीं थी । मुझे देवरिया जाना था तो मथुरा जब मैं जा रहा था, बरसाने से गोवर्धन तक पण्डितजी महाराज मेरे साथ गये क्योंकि उन्हें गोवर्धन विद्यालय में अध्यापन के लिए जाना था, उस समय गोवर्धन दान घाटी में पण्डितजी ने दस हजार रुपये मेरे हाथ में रख दिए थे । मैंने पूछा कि ये क्यों तो उन्होंने कहा कि इनसे तुम देवरिया में कथा का आयोजन करना । मैं पण्डितजी के चरणों में गिर गया और कहा कि ऐसा मत कीजिये, आप तो मुझे आशीर्वाद दीजिये, आप ये पैसे रखिये, ठाकुरजी सब व्यवस्था करेंगे और मैंने उनकी दी धनराशि लौटा दी लेकिन पण्डितजी की उदारता को देखिये कि उन्होंने कथा तक के आयोजन के लिए मुझे दस हजार रुपये दे दिए थे जबकि आजकल का कथा व्यास पैसा कमाने के लिए ही कथा करता है । बरसाने से देवरिया आने के बाद मैं जो कुछ भी संकल्प करता गया कि कथा के लिए इस तरह शामियाना बनना चाहिए, इस तरह की व्यवस्था होनी चाहिए, वह सब पूर्ण होता गया । बड़े ही धूमधाम के साथ देवरिया में पण्डितजी की कथा हुई, इसके पहले देवरिया में कभी कोई कथा ही नहीं हुई थी । उस कथा के बाद से अब तक देवरिया में पण्डितजी, महेशजी और सुरेशजी आदि की सवा सौ से अधिक कथायें हो चुकी हैं तथा कई स्थानों में प्रभात फेरियाँ चलने लगी हैं । श्रीबाबा महाराज का संकल्प था, अतः उनके संकल्प के अनुसार सभी कल्याणकारी कार्य वहाँ अत्यन्त सहजता के साथ होने लगे । अब तो देवरिया में एक गीता भवन और एक सत्संग भवन भी बन गया है । कल्याण के ऐसे कार्यों के बारे में हम लोग तो कभी सोच भी नहीं सकते थे, परन्तु श्रीबाबा भागवत कथा के दो साल पहले ही मुझसे कहने लगे थे कि तुम देवरिया में कथा का आयोजन करो और उनकी ही भावना को देखकर नित्यानन्द महाराज भी अपने परिकरों के साथ कथा में पधारे, सखी शरण महाराजजी भी देवरिया कथा में आया करते थे । एक साल भइयाजी भी जा चुके हैं, उनके पिताजी श्रीप्रकाशजी तथा नन्दगाँव के श्रीरमेश गोस्वामी जी भी वहाँ जा चुके हैं ।

**प्रश्न** – बरसाने में श्रीजी मन्दिर के समाज गान में श्रीबाबा की उपस्थिति के बारे में कुछ बताइए ।

**उत्तर** – राधाष्टमी के पूर्व जो समाज गान होता था, वह श्रीजी की मंगला आरती के पहले होता था तो श्रीबाबा दो घंटे पहले ही रात को दो बजे श्रीजी मन्दिर चले जाते थे । उस समाज गान में मृदंग केवल बाबा महाराज ही बजाया करते थे ।

**प्रश्न** – पण्डितजी के बारे में भी आप कुछ बताइए ।

**उत्तर** – उन दिनों पण्डितजी गोवर्धन से आगे एक गाँव था, वहाँ स्कूल में पढ़ाने के लिए वे जाया करते थे । पण्डितजी ने बहुत अधिक शारीरिक परिश्रम किया है । उनकी परिश्रमशीलता और सहनशीलता बेजोड़ है । वे ऐसे हैं कि सबके साथ मिले रहते हैं, उनसे कोई भी कुछ भी कह देता है और वे सब सहन कर लेते हैं । पण्डितजी उदार भी बहुत हैं । उनकी उदारता का ही तो विलक्षण उदाहरण है कि देवरिया में कथा के आयोजन के लिए उन्होंने कथा के पहले ही मुझे दस हजार रुपये दे दिए थे, नहीं तो उनको इससे क्या प्रयोजन था ? उन्हें पता था कि इसके पास पैसा तो है नहीं, यह कथा का आयोजन कैसे करेगा, अतः वे मेरा सहयोग कर रहे थे । उनकी यह कथा सन् १९९४ में हुई थी । उसके बाद से लगातार देवरिया में कथा हो रही है । मूल देवरिया में पण्डित जी ने २९ साल तक निरन्तर कथा कही थी, दो वर्षों से राधिकेशजी वहाँ कथा कर रहे हैं । एक साल मुरलिकाजी ने भी वहाँ कथा की है । महेशजी और सुरेशजी की कथायें देवरिया के समीपस्थ गाँवों में बहुत हुई हैं । बाबाश्री की कृपा से मानमन्दिर के कथाकारों की कथाएँ हमारे यहाँ ऐसी ही होती रहें...यही अभिलाषा है ।

**प्रश्न** – श्रीबाबा महाराज के प्रति आपके संस्मरण, उनके साथ बिताये हुए पल, उनसे सम्बन्धित जो भी यादगार घटनाएँ हों, कृपया उन्हें बताइए ? प्रारम्भ में जब आप श्रीबाबा से जुड़े थे तो उन दिनों संध्याकालीन सत्संग में वे कौन से ग्रन्थ पर आधारित कथा किया करते थे ?

**उत्तर** – अधिकतर महाराजश्री श्रीमद्भागवत के ही प्रसंगों पर आधारित कथा किया करते थे, उनकी कथा में उपदेशात्मक अंश ही अधिक होता था । श्रीबाबा का प्रयास यह रहता था कि भगवल्लीलाओं का वर्णन इस ढंग से हो, जिससे कि संसार की समस्त आसक्तियों से बचते हुए साधक के साधन में बल उत्पन्न हो, ऐसा श्रीबाबा चाहते

थे । एक बार सखीशरणमहाराजजी ने बताया कि मैं पिसाया के जंगल में भजन करने जाया करता था तो दिन में तो श्रीबाबा की सेवा में गह्वरवन आ जाया करता था और सायंकाल पिसाया चला जाता था । उस समय बाबा गह्वरवन की कुटी में रहा करते थे । यह घटना मेरे यहाँ आने से पूर्व की है । सखीशरणमहाराज जी ने बताया कि मैं रात को पिसाया में रहकर ही भजन करता था तो एक दिन मैं जंगल में भजन कर रहा था तो ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई मेरे शरीर को छू रहा है तो मैंने कहा – 'अरे भैया ! तुम कौन हो, मेरे भजन में बाधा उत्पन्न मत करो । मुझे भजन करने दो ।' कोई मुझे दिखाई तो देता नहीं था किन्तु मेरी पीठ सहलाता था । मेरी समझ में आया कि यह कोई प्रेत है । मैंने उससे कहा कि तुमने पता नहीं कौन-सा कुकर्म किया है कि उसके कारण प्रेत बने हो और अब दूसरों को भी भजन नहीं करने देते हो । जैसे ही मैंने इतना कहा कि वह मेरी भौंह नोचने लगा, जब ऐसा हुआ तो मैं लेट गया, लेटने पर ऐसा अनुभव हुआ कि कोई मेरी छाती पर लेट गया । मैंने कहा कि यह तो बहुत तंग कर रहा है, अब मैं रात को क्या करूँगा ? सुबह गह्वरवन आने पर मैंने श्रीबाबा को यह घटना बताई तो उन्होंने कहा कि तुम यहीं गह्वरवन में ही भजन किया करो, शाम को पिसाया मत जाया करो । श्रीबाबा के आदेश से मैं गह्वरवन में रात्रि में भी रुककर भजन कर रहा था तो वह प्रेत यहाँ भी आ गया और मेरी पलक के बाल नोचने लगा । मैंने बाबा से कहा कि महाराजजी ! वह तो यहाँ भी आ गया । श्रीबाबा ने लौंग देते हुए मुझसे कहा कि इसको मुख में रख लो । मैंने बाबामहाराज द्वारा दी हुई लौंग को मुख में रख लिया, उसके बाद मुझको फिर कभी भी प्रेत का अनुभव नहीं हुआ ।

श्रीबाबा बड़े ही निर्भय सन्त हैं, उन्होंने जीवन में कभी किसी से भय नहीं किया । मेरे भाई साहब, जो गाजीपुर संस्कृत विद्यालय से संस्कृत का अध्ययन कर रहे थे, उनकी मध्यमा अथवा शास्त्री की परीक्षा थी । उस विद्यालय में एक ब्रजवासी लड़का भी था, जो बड़े ही उद्दण्ड प्रकृति का था, उसने मेरे भाई साहब से कह दिया था कि तुम परीक्षा में मुझे नक़ल करा देना, यदि नक़ल नहीं कराओगे तो मैं तुम्हें परीक्षा नहीं देने दूँगा । भाई साहब ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया था लेकिन जब वे विद्यालय में परीक्षा देने गये तो वह गेट पर खड़ा था और उसने भाई साहब से कहा कि आज तुमको मुझे नक़ल कराना पड़ेगा । उन्होंने साफ़ मना करते हुए कहा कि मैं तुम्हें नक़ल नहीं कराऊँगा, मैं अपनी परीक्षा दूँगा । इतना सुनते ही उस लड़के ने चाकू निकालकर भाई साहब को दौड़ा लिया । भाई साहब विद्यालय से भागकर मान मन्दिर में श्रीबाबा के पास आ गये । श्रीबाबा ने उनसे कहा कि तुम्हारी तो आज परीक्षा थी, फिर तुम यहाँ कैसे आ गये ? भाई साहब ने सब समस्या श्रीबाबा को बता दी तो उन्होंने कहा – 'कोई बात नहीं, मैं तुम्हारे साथ विद्यालय चलता हूँ ।' श्रीबाबा स्वयं प्रेम सरोवर के निकट स्थित गाजीपुर संस्कृत विद्यालय में गये और जितने दिन परीक्षा हुई, वे गेट पर टहलते रहे । प्रतिदिन बाबा महाराज विद्यालय जाते थे और मेरे भाई साहब को उन्होंने परीक्षा दिलवाई । श्रीबाबा को देखकर उस चाकूबाज लड़के का मेरे भाई साहब के पास जाने और उनसे कुछ कहने का साहस नहीं हुआ । श्रीबाबा का यह दिव्य दैवी गुण है निर्भयता । गीता में भगवान् ने दैवी सम्पत्ति का वर्णन करते हुए अभय अर्थात् निर्भयता को उसका सबसे पहला लक्षण बताया है – अभयं सत्त्वसंशुद्धि.....(गीता १६/१) । श्रीबाबा अत्यधिक विषम परिस्थितियों में भी पूर्ण रूप से निर्भय रहा करते थे । उनको किसी से किसी प्रकार का कोई भय नहीं था और वे तो इस दैवी सम्पत्ति अभय या निर्भयता को लेकर ही पैदा हुए थे ।

**अरि मनमोहन की है प्यारी, राधा वृषभानु दुलारी ||**
बरसाने की कुँवरि लाड़िली, ब्रज की रूप उजारी |
रास रसीली छैल छबीली, मधुरे बोलन वारी |
रंग रंगीली गुन गरबीली, प्रेम भरी मतवारी |
बड़ी दयाल कृपा की मूरति, श्यामा भोरी भारी |
गोरे तन पै नीली साड़ी, हीरा जड़ी किनारी |
रतन जड़ीली अंगिया चमकै, लहंगा घूमघुमारी |
इनकौ रूप येई दरसावैं, चरन कमल पर वारी ||

-(पूज्यश्री बाबा महाराज कृत)

# ब्रज की शान 'राधारानी ब्रजयात्रा'

**बाबाश्री के बारे में श्रीमार्कण्डेयप्रसाद शुक्लजी (जनवरी २०२२) की भावनाएँ**

प्रश्न – मानमन्दिर द्वारा संचालित राधारानी ब्रजयात्रा में श्रीबाबामहाराज के सन्दर्भ में अपने विशेष अनुभवों को बताइए ।

उत्तर – कुछ समय मैं भी ब्रजयात्रा में भोजन व्यवस्था के सहयोग में रहा था । यात्रा में तब भोजन सेवा के बाद बाबा महाराज का सत्संग होता था, प्रयास यही रहता था कि सूर्यास्त के पूर्व ही ब्रजयात्रियों का भोजन हो जाए । उस समय चार-साढ़े हजार यात्री परिक्रमा में रहा करते थे । एक बार ऐसा हुआ कि प्रसाद तैयार हो गया था और मैं एक थाली में श्रीराधामानबिहारीलाल को भोग लगाने के लिए ले जा रहा था, बीच में एक महिला यात्री ने मुझसे कहा – 'शुक्लाजी ! कल से मुझे थोड़ा आटा दे दिया करिए । मैं स्वयं रोटी बनाकर प्रसाद पा लिया करूँगी ।' मैंने पूछा कि क्या आप स्वपाकी हैं अर्थात् अपने हाथ से बनाया हुआ भोजन ही ग्रहण करती हैं । उस महिला ने कहा कि मैं स्वपाकी तो नहीं हूँ किन्तु हम लोग जैन हैं और सूर्यास्त के बाद हम लोग भोजन नहीं करते हैं । मैंने उससे पूछा कि कल आपने क्या खाया था, क्योंकि कल भी तो भोजन का परिवेषण सूर्यास्त के समय ही हुआ था । उस महिला ने बताया कि कल मैंने कुछ नहीं खाया था । उसकी बात सुनकर मैंने देखा कि आज पुनः सूर्यास्त होने जा रहा है तो मैंने उससे कहा कि तुम बैठ जाओ और इसी प्रसाद को पा लो । मैंने महिला यात्री को प्रसाद दे दिया, इस घटना को किसी महात्मा ने देख लिया तो उसने श्रीबाबा के पास जाकर उनसे मेरी शिकायत कर दी कि शुक्लाजी मनमाना काम करते हैं । ठाकुरजी को भोग भी नहीं लगा किन्तु उन्होंने अपनी पहचान के किसी प्रिय व्यक्ति को ठाकुरजी का प्रसाद ही खिला दिया । श्रीबाबा ने मुझे बुलाया तो मैं डरते हुए उनके सामने खड़ा हो गया । श्रीबाबा ने कहा कि तुम मानबिहारीलाल का भोग का थाल ले जा रहे थे, फिर तुमने बिना उनका भोग लगाये किसी यात्री को क्यों खिला दिया ? मैंने कहा कि बाबा ! उस महिला यात्री का नियम है सूर्यास्त के बाद भोजन न करने का तो मैंने सोचा कि आज भी सूर्यास्त हो जाएगा, कल भी इसने सूर्यास्त के बाद प्रसाद नहीं पाया, आज भी प्रसाद नहीं पा सकेगी, अतः मैंने मानबिहारीलालजी को मानसिक भोग लगाकर इसे दे दिया । मेरी बात सुनकर श्रीबाबा प्रसन्न हो गये और उन्होंने कहा कि हमारा ठाकुर खाए अथवा न खाए, हमारे यात्रियों का खाना परम आवश्यक है ।

आरम्भ से ही श्रीबाबा का सिद्धान्त पक्ष बहुत मजबूत है । उस सिद्धान्त पक्ष की मजबूती हम सबके हृदय में भी हो, इसका अपने जीवन में श्रीबाबा ने सतत् प्रयास किया । वे चाहते हैं कि हम लोग शास्त्र के निर्देशों का पालन करते हुए, शास्त्र की परम्परा के अनुसार जीवन-निर्वाह करते हुए भजन करें, मनमाना भजन न करें । शास्त्र के अनुसार ही सब चलें, सदा बाबा का यही प्रयास रहता था ।

**प्रश्न** – मानमन्दिर की ब्रजयात्रा में श्रीबाबा के नेतृत्त्व में जो भी चमत्कारिक घटनायें आपने प्रत्यक्ष देखी हों, उन्हें भी बताइए ।

**उत्तर** – एक बार श्रीराधारानी ब्रजयात्रा में पैदल चलते समय श्रीबाबा के पाँव में बड़े जोर से ठोकर लग गयी, उसके कारण पैर के अँगूठे का पूरा नाखून ही निकल गया था। इसके बावजूद भी श्रीबाबा ने पूरी चालीस दिन की यात्रा पैदल ही चलकर पूरी की, जबकि पैर के अँगूठे का नाखून यदि पूरा निकल जाए तो चलने में बहुत कष्ट होता है । ब्रजयात्रा में अगले पड़ाव के लिए लगभग पन्द्रह कि.मी. की दूरी तक तो प्रतिदिन ही सभी को चलना होता है किन्तु श्रीबाबा तो यात्रा के संचालक होने पर भी पैर में अपार कष्ट होने की स्थिति में पैदल ही चलते रहे, कभी भी

किसी वाहन का प्रयोग उन्होंने नहीं किया, जबकि किसी अन्य व्यक्ति के लिए तो ऐसी अवस्था में थोड़ी दूर भी चलना बहुत कष्टप्रद हो जाता और परिक्रमा करना तो पूर्णतया असम्भव होता परन्तु श्रीबाबा की यही तो अलौकिक विशेषतायें हैं, जिनको देखने पर प्रतीत होता है कि उनके भीतर कितनी अगाध तितिक्षा (कष्टों को सहने की क्षमता) है और वे देहाभिमान से सर्वथा अतीत हो चुके दिव्य महापुरुष हैं ।

ब्रजयात्रा के दौरान बाबा की एक अन्य विशेषता देखने को मिलती थी कि वे परिक्रमा के रास्ते में पड़ने वाले एक भी स्थान को छोड़ते नहीं थे, सभी लीलास्थलियों का स्वयं दर्शन करते और सभी यात्रियों को दर्शन कराते तथा उसका महत्त्व बताया करते थे । श्रीबाबा यात्रा में सबसे आगे चला करते थे । एक बार हम लोग रासवन 'रासौली' पहुँचे तो वहाँ का सरोवर पूरी तरह कीचड़ से युक्त था किन्तु श्रीबाबा ने उस कीचड़ में से भी थोड़ा-सा जल लेकर अपने मुख में डालकर आचमन किया । वह कुण्ड जैसा तो नहीं लग रहा था, कोई पोखर था और उसमें गन्दा पानी था, उसे भी बड़ी श्रद्धा के साथ श्रीबाबा ने अपने मुख में डाल लिया । यह कितनी निष्ठा की बात है । मुझे तो ऐसा लगता है कि आजकल के महात्मा लोग बड़े-बड़े आश्रम बनवा लेते हैं और जाने क्या-क्या करते हैं ? मानमन्दिर सेवा संस्थान के अन्तर्गत भी कई बड़े भवन निर्मित किये गये हैं किन्तु ये भक्तों के लिए हैं । इसका एक उदाहरण मैं देता हूँ कि एक बार मैं देवरिया से 'लाल इमली कम्पनी' की एक सफ़ेद ऊनी चादर श्रीबाबा के लिए लाया तो वे नाराज हो गये । बाबा ने पूछा कि यह कितने की है तो मैंने बताया कि यह सात सौ रुपये की है । उस समय सात सौ रुपये बहुत होते थे । श्रीबाबा ने कहा कि तुमने इतना अधिक धन व्यर्थ में ही मेरे लिए खर्च कर दिया, यदि सात सौ रुपये के तुम टाट ले आते तो यहाँ कितने ही लोग जो सत्संग में आते हैं, वे धरती पर ही बैठते हैं, वे उस टाट पर बैठते । मुझे अपने लिए इतनी कीमती यह चादर नहीं चाहिए । श्रीबाबा ने उस ऊनी चादर को नहीं ग्रहण किया । उनका जो कुछ भी है, सब धामसेवा के प्रति, लीलास्थलियों की सेवा और ब्रज की प्राचीन धरोहर के संरक्षण के प्रति समर्पित है । आप लोग जिस गह्वरवन को देखते हैं, ४६ वर्षों के लम्बे संघर्ष के बाद श्रीबाबामहाराज के द्वारा उसका संरक्षण हो पाया है ।

**प्रश्न** – गह्वरवन के संरक्षण हेतु जो दीर्घकालीन संघर्ष और परिश्रम किया गया, कृपया इस अद्भुत कार्य के बारे में भी कुछ प्रकाश डालें ।

**उत्तर** – श्रीबाबामहाराज की प्रेरणा से उनके कृपापात्र ब्रजवासियों ने इसके संरक्षण हेतु अथक परिश्रम किया और बहुत कष्ट सहा । पण्डितजी ने इसके लिए बहुत बड़ा प्रयास किया, वे बार-बार कोर्ट-कचहरी में जाया करते थे । बाबा महाराज का जो भी आदेश होता, पण्डितजी सतत् ही उनके आज्ञापालन में लगे रहते थे । उनके जैसा आनुगत्य (आज्ञापालन) तो किसी में नहीं है, मैंने अपने जीवन में आज तक उनके जैसा बाबा के प्रति आनुगत्य किसी अन्य में नहीं देखा । पण्डितजी ने हम लोगों को गह्वरवन के संरक्षण के प्रति जो भी निर्देश किया, उसके अनुसार हम लोग अपनी क्षमता के अनुसार उनका सहयोग करते रहे । पण्डितजी इस कार्य में सदा प्रयत्नशील बने रहते थे और साथ ही भइयाजी भी गह्वरवन के संरक्षण हेतु बहुत परिश्रम किया करते थे । प्रारम्भ से ये दोनों ही श्रीबाबा के आदेशानुसार सभी कार्यों को किया करते थे । अस्तु, मैं यह कह रहा था कि यहाँ जितने भी भवन बने हैं, आवश्यकता को देखते हुए इनका निर्माण किया गया है । जैसा कि आजकल साधु-समाज अथवा आध्यात्मिक संस्थाओं में होता है कि कोई बहुत बड़ा महन्त है तो उसके विशाल भव्य आश्रम अथवा विशाल मन्दिर का वैभव केवल प्रदर्शन के लिए होता है किन्तु मान मन्दिर के अन्तर्गत रस मन्दिर, रस कुञ्ज, रस मण्डप एवं गोशाला तक जितने भी भवनों का निर्माण हुआ है, यह तो आवश्यकता को देखते हुए भक्तों की सुविधा के लिए इनका निर्माण करवाया गया है, वैभव के प्रदर्शन हेतु इनका निर्माण नहीं हुआ है । आज तक देखिये, श्रीराधामानबिहारीलालजी का मन्दिर ज्यों का त्यों पड़ा हुआ है, भक्तों की सेवा हो गयी (भक्तों की सुविधा हेतु भवनों का निर्माण हो गया) परन्तु ठाकुरजी के मन्दिर के नव निर्माण का कार्य अभी बाकी है । श्रीबाबा का यही शास्त्रीय सिद्धान्त है – 'राम ते अधिक राम कर दासा' -

पहले भक्त पीछे भगवान् । भक्तों की सेवा को श्रीबाबा ने प्राथमिकता दी है और यह प्रत्यक्ष दिखाई देता है । उनका कभी अपने शरीर के प्रति थोड़ा भी अभिनिवेश नहीं रहा है, अपने शरीर को उन्होंने कभी कोई महत्त्व नहीं दिया, अपनी सुख-सुविधा के प्रति उन्होंने कभी भी ध्यान नहीं दिया ।

**प्रश्न** – श्रीबाबा के सन्दर्भ में आप क्या अनुभव करते हैं, आपके क्या विचार हैं ?

**उत्तर** – हमारे देश भारत का जो आध्यात्मिक पक्ष है, इसमें जब-जब ह्रास होता है । समय के अनुसार ह्रास होना भी एक परम्परा ही है । कोई भी चीज धीरे-धीरे धूमिल होने लगती है । इसीलिए समय-समय पर महापुरुषों का आविर्भाव होता रहा है । मेरा तो मानना है कि उसी क्रम में श्रीबाबामहाराज का भी आविर्भाव हुआ है । सिद्धान्त के अनुसार भगवत्प्राप्ति के पश्चात् शरीर नहीं रहता है, शास्त्रों में ऐसा मैंने पढ़ा है, महात्माओं के मुख से सुना है कि भगवत्प्राप्ति के उपरान्त शरीर अधिक से अधिक २१ दिनों में सूखे पत्ते की तरह झड़ जाता है लेकिन उसके बाद भी यदि किसी का शरीर रहता है तो सिद्धान्त यही है कि भगवान् उसे अपने उपयोग के लिए ले लेते हैं । अब जैसे इस समय बाबा का जो भी क्रियाकलाप है, वह ठाकुरजी का क्रियाकलाप है । मेरे दृष्टिकोण के अनुसार बाबा का अपना कोई संकल्प नहीं है, जो कुछ भी है, अब उनके भीतर ठाकुरजी का ही संकल्प है क्योंकि इतने बड़े-बड़े काम जो यहाँ श्रीबाबा के द्वारा हो रहे हैं, क्या उन्हें करना आसान है, इन कार्यों के बारे में सोचकर ही मनुष्य का मस्तिष्क ख़राब हो जाएगा कि ये सब कहाँ से हो रहा है, कैसे हो रहा है ? अब जैसे मान मन्दिर की माताजी गोशाला को ही देख लीजिये, अन्य स्थानों में तो गोशाला को चलाने के लिए अथवा अन्य कार्यों के लिए किस तरह टेलीविजन पर तथा मीडिया के अन्य माध्यमों के द्वारा प्रचार किया जाता है, धन की याचना की जाती है किन्तु मान मन्दिर में इतने अधिक कार्यों को लेकर कभी कोई हाय-हाय नहीं होती है, न किसी से याचना की जाती है । यहाँ तो सहज में ही सब कार्य चलते रहते हैं । मैंने तो यह भी सुना है कि अच्छे पारदर्शी लोग श्रीबाबा को श्रीजी की अष्ट महासखियों में से एक, किसी अन्तरंग महासखी का अवतार मानते हैं । हम लोगों के पास तो उनके वास्तविक स्वरूप को समझने की दिव्य दृष्टि नहीं है, हम तो उनके बारे में क्या कह सकते हैं किन्तु जो लोग श्रीबाबा को श्रीजी की किसी महासखी का अवतार बताते हैं, ऐसा कहने वाले लोग भी सम्माननीय एवं विश्वसनीय जन हैं । इतना तो निश्चित है कि श्रीबाबा कोई सामान्य पुरुष नहीं हैं और सनातन धर्म की परम्परा के अनुसार हमारे आध्यात्मिक जगत पर जब धूल पड़ जाती है, उसको झाड़ने-पोंछने के लिए समय-समय पर भगवद्धाम से आने वाले महापुरुषों, भगवान् के परिकरों की श्रृंखला में ही श्रीबाबा महाराज हैं । देखिये आप, खनन माफियाओं द्वारा विस्फोटक पदार्थों एवं अन्य विनाशकारी उपकरणों द्वारा ब्रज के पर्वतों का जो व्यापक रूप से खनन किया जा रहा था, श्रीबाबा महाराज के ही प्रयास से श्रीराधा-माधव के लीला-विहार के स्थल इन दिव्य पर्वतों की रक्षा हो सकी । इसी प्रकार ब्रज की लीला स्थलियों, सरोवरों आदि की सुरक्षा और इनके जीर्णोद्धार का अभूतपूर्व कार्य भी श्रीबाबा महाराज के द्वारा किया गया है । उनकी उत्कट आकांक्षा है कि ब्रज का प्राचीन स्वरूप बना रहे क्योंकि ब्रज का स्वरूप बने रहने से ही तो हमारे अन्दर ब्रज भाव का विकास होगा और वैसे भी साधना का सोपान तो यहीं से प्रारम्भ होता है । भगवान् श्रीकृष्ण के नित्य धाम गमन के पश्चात् सर्वप्रथम उनके प्रपौत्र वज्रनाभजी के द्वारा महर्षि शाण्डिल्य की प्रेरणा से ब्रज की लुप्त हो चुकी लीलास्थलियों की खोज करके ब्रज को फिर से बसाया गया था । उनके बाद कलियुग के प्रभाव से एक बार फिर ब्रज की लीलास्थलियाँ जब लुप्त हो गयीं तो स्वयं श्रीराधा-माधव की प्रेरणा से देवर्षि नारद के अवतार नारायण भट्टजी के द्वारा पुनः ब्रज की लीलास्थलियों की खोज करके, उनका संरक्षण करके फिर से ब्रज को बसाया गया, उनके अतिरिक्त श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके परिकर श्रीरूप-सनातन आदि एवं महाप्रभु श्रीवल्लभाचार्यजी तथा अन्य भी ब्रजरसिक महापुरुषों ने ब्रज की लीला स्थलियों का संरक्षण किया, इन्हीं ब्रजसेवी-ब्रजरक्षक महापुरुषों की परम्परा में श्रीबाबा महाराज भी हैं, ऐसा मेरा विश्वास है ।

**प्रश्न** – नित्यानन्दजी महाराज श्रीबाबा के बारे में क्या कहा करते थे ?

**उत्तर** – श्रीनित्यानन्दजीमहाराज बड़े ही विनोदी प्रकृति के थे । वे कहते थे कि बाबा ने एक पागलखाना खोल दिया है,

सभी लोग उस पागलखाने में भरती हो जाओ । जिसका सौभाग्य होगा, वह इस पागलखाने में आ जायेगा । हमारे देवरिया में श्रीबाबा महाराज के प्रतिनिधियों के द्वारा बहुत प्रचार हुआ है, नित्यानन्दजीमहाराज देवरिया में अपने प्रवचनों में एक बात अवश्य कहा करते थे – 'साल में एक बार मानमन्दिर चले जाया करो, वहाँ जाने पर तुम्हारी भक्ति पर मोहर लग जायेगी । श्रीरमेशबाबाजी के पास अवश्य ही जाया करो ।'

मेरा तो श्रीबाबामहाराज के बारे में यही कहना है कि वे भगवत्कृपा के साक्षात् स्वरूप हैं । उनके द्वारा सारे विश्व में कितना अधिक निष्काम भाव से, निःस्वार्थ भाव से भगवद्भक्ति का प्रचार किया गया है । श्रीबाबा के मन में अपने नाम-यश-प्रतिष्ठा की रंच मात्र भी कोई कामना नहीं है । प्रतिष्ठा-यश के लोलुप वेषधारी लोग आजकल टेलीविजन और सोशल मीडिया के माध्यम से व्यक्तिगत प्रचार-प्रसार करने में संलग्न हैं, इसके लिए ये लोग बहुत अधिक धन का भी व्यय करते हैं कि संसार में हमारा यश बढ़े और अधिक से अधिक लोग हमारे अनुयायी बनें किन्तु श्रीबाबा महाराज तो अध्यात्म के पथिक के लिए लोक मान्यता को दावानल के समान अत्यधिक हानिकारक समझते हैं । मान-प्रतिष्ठा से वे कोसों दूर रहते हैं । उन्होंने आज तक किसी को अपना शिष्य नहीं बनाया, धन का कभी स्पर्श नहीं किया । भारत सरकार ने उन्हें पद्मश्री से सम्मानित करने के लिए राष्ट्रपति भवन, दिल्ली में निमन्त्रित किया किन्तु श्रीबाबा नहीं गये, अन्त में सरकार ने मथुरा के डी.एम. को मानमन्दिर में ही भेजकर उन्हें इस सम्मान से अलंकृत किया । श्रीबाबा के हृदय में कभी किसी प्रतिष्ठित पुरस्कार और मान-प्रतिष्ठा की लालसा नहीं रही । कीर्ति की कामना से सर्वथा रहित, प्रच्छन्न (पीछे) रहकर ही श्रीबाबा ने जो महान कार्य किये, अपनी मान-प्रतिष्ठा और यश के पिपासु लोग मीडिया के माध्यम से अत्यधिक व्यापक प्रचार-प्रसार करने पर भी श्रीबाबा की होड़ नहीं कर सकते । राधारानी ब्रजयात्रा में चालीस दिनों तक चौबीस घंटे अखण्ड रूप से दिन-रात कीर्तन होता रहता है, मुझसे तो इतना कीर्तन नहीं हो पाता था किन्तु बाबा बारम्बार सबसे यही कहते थे कि संकीर्तन को कभी बन्द मत करो, निरन्तर कीर्तन करते रहो, कानों से नाम कीर्तन सुनते ही रहो, बातचीत मत करो ।

**प्रश्न** – आपने तो मान मन्दिर की पुरानी ब्रजयात्राओं को देखा है, जब कोई सुविधा नहीं होती थी, उस समय की यात्राओं के बारे में बतायें ।

**उत्तर** – पहली यात्रा सन् १९८८ से आरम्भ हुई थी, उसके बाद दूसरी यात्रा पुरुषोत्तम मास में हुई थी । ग्रीष्म ऋतु थी, गर्मी का बहुत अधिक प्रकोप था, सभी यात्रियों के साथ ही बाबा भी सभी प्रकार के कष्ट सहते थे । अपने लिए कभी श्रीबाबा ने अलग से तम्बू या शिविर नहीं लगवाया और न ही अपने लिए कोई विशेष सुविधा का प्रबन्ध होने दिया । सामान्य यात्री जिस तरह यात्रा में रहते, बिलकुल उन्हीं की तरह श्रीबाबा भी सुविधा रहित होकर, कष्टों को प्रसन्नता के साथ सहन करते हुए यात्रा करते थे । पैर के नाखून में जरा भी चोट लग जाए तो बहुत तेज दर्द होता है, शरीर में सबसे अधिक दर्द वहीं होता है, परन्तु पैर में ठोकर लगने के कारण नाख़ून पूरी तरह निकल गया, फिर भी श्रीबाबा अपार कष्ट को सहन करते हुए आनन्द के साथ पदयात्रा करते रहे । मैंने तो महात्माओं के मुख से यही सुना है कि श्रीबाबा श्रीराधारानी की अन्तरंग महासखी के अवतार हैं । सन्त समाज में श्रीबाबा को श्रीजी की विशेष सहचरी का अवतार माना जाता है ।

**प्रश्न** – श्रीबाबा के सानिध्य में आपने किसी चमत्कारिक घटना का अनुभव किया है ?

**उत्तर** – एक बार ब्रज के बहताना ग्राम निवासी श्रीरघुवीर भगतजी, जो अपने पूरे परिवार के साथ गह्वर वन में श्रीबाबा की प्रेरणा से रहा करते थे, उनके पुत्र परमा की ट्रैक्टर ट्रौली मानगढ़ से नीचे गिर पड़ी किन्तु उन्हें कोई खरोंच तक नहीं आई और इतनी भयंकर दुर्घटना के बावजूद भी वे पूर्णतया सकुशल बच गये, यह बहुत ही आश्चर्यजनक घटना थी । श्रीबाबा से इस बारे में पूछा गया तो उन्होंने अपने दैनिक सत्संग में मुस्कुराते हुए यही कहा कि हमारे मानबिहारीलाल बड़े ही खिलाड़ी हैं, विविध प्रकार के खेल वे खेला करते हैं, गेंद खेलने के भी वे बड़े शौक़ीन हैं तो इस बार उन्होंने गेंद न मिलने पर कौतुक रच डाला और ट्रैक्टर ट्रौली को ही गेंद की तरह पर्वत से नीचे फेंका और यह उनकी विनोद भरी क्रीड़ा ही थी, जिसमें किसी प्रकार की हानि नहीं हुई । इस तरह की घटनाएँ तो मान मन्दिर में प्रायः होती ही रहती हैं किन्तु बाबा

कभी भी चमत्कारों की बात नहीं करते हैं । हाँ, इतना अवश्य कहते हैं कि हमारे मानबिहारीलालजी सर्वदा कोई न कोई चमत्कार करते ही रहते हैं किन्तु मेरे अन्दर कोई चमत्कार अथवा कोई विशेषता है, ऐसा श्रीबाबा ने कभी नहीं कहा । वस्तुतः यही सब श्रीबाबा की विशेषताएँ हैं, जिन्हें देखकर उनके प्रति श्रद्धा लगातार बढ़ती जाती है । वास्तव में जो श्रद्धालु व्यक्ति होता है, सहृदय, समझदार और आत्मकल्याण का इच्छुक होता है, वह श्रीबाबा के अलौकिक सद्गुणों के कारण यहाँ आते ही बिक जाता है ।

# श्रीयशोदाजी का गह्वर-आगमन

श्रीराधा के रूप, गुण सुनके यशोदाजी आँखों से प्रेम के आँसू बहाने लगती हैं । उपनन्दजी की रानी यशोदाजी को समझाने लगती हैं और कहती हैं – अहो यशोदे ! गिरिराजजी की वाणी को सत्य मानो, कीर्ति रानी की अति लाड़ली कन्या के साथ ही श्यामसुन्दर का विवाह होगा । अब चलो, हम लोग अच्छी तरह से भगवान् नारायण की पूजा करें । उपनन्द पत्नी की बात सुनकर यशोदाजी ने उनके चरणों में प्रणाम किया ।

एक बार यशोदाजी अपने साथ की स्त्रियों के साथ बरसाने से होती हुई वहीँ आगे दोहनी कुण्ड पहुँचीं । वहाँ गह्वर वन में लाड़लीजी अपनी सखियों के साथ खेल रही थीं । उस गह्वर वन में बड़ा ही सुन्दर झरना प्रवाहित हो रहा था और उस वन में सघन वृक्षों की अत्यन्त सुखदायी छाया थी ।यशोदाजी और उनके साथ की स्त्रियाँ उस वन में कुछ देर के लिए विश्राम करना चाहती थीं । उस वन में लताओं और वृक्षों में सुन्दर फूल खिले थे और तीन प्रकार की सुखदायक हवा चल रही थी तथा झरने की बड़ी ही मधुर ध्वनि हो रही थी । गह्वर वन में तोता-मैना आदि अनेक प्रकार के पक्षियों की भारी भीड़ थी । उस वन में विश्राम करने के लिए यशोदाजी श्रेष्ठ गोपिकाओं के साथ बैठ गयीं । वे सभी गह्वर वन के वृक्ष-लताओं की प्रशंसा करने लगीं, जो नवरंग में रंगे थे । इतने में ही उन्होंने बरसाने की ओर से एक स्त्री को आते हुए देखा ।यशोदाजी एवं उनकी संगिनियों ने उस स्त्री को प्रेम से अपने पास बैठाया और उसका नाम पूछने लगीं तथा उस स्त्री से कहा – 'तुम तो वृषभानु राजा की नगरी बरसाने में रहती हो, तुम्हारे तो बड़े भाग्य हैं ।अब तुम प्रेम से गोप वंश (वृषभानुजी के वंश ) की, उनके कुल की कुशलता को कहो, जिनके वृषभानुपुर में सभी गोपी और गोप आनन्द से रहते हैं । महीभानुजी के पुत्र वृषभानु जी का तो अचल राज्य है ।' यशोदाजी की बात सुनकर उस स्त्री ने कहा – 'मेरा नाम है रागकला और मैं सूर्य वंश की ढाँढ़िनी हूँ । मैं तो वृषभानुजी के गोपकुल की ही सर्वदा प्रशंसा करती रहती हूँ, यही मेरा कार्य है । संगीत के माध्यम से, नृत्य, गान और विविध बाजों की ध्वनि के द्वारा मैं वृषभानुजी के कुल की महिमा का प्रचार-प्रसार करती हूँ । महारानी कीर्ति मेरी रीति को भली प्रकार समझती हैं । मैं प्रतिदिन सुबह-शाम वृषभानुजी के महल में जाती हूँ । रानी कीर्ति के द्वारा प्रदान की गयी सम्पत्ति से मेरा घर सदा भरा रहता है ।' ढाँढ़िनी की बात सुनकर अपने आँचल के छोर को मुख पर रखकर यशोदाजी मुस्कुराने लगीं, फिर तो वे उस ढाँढ़िनी से वृषभानुजी के यहाँ की भीतरी रहस्य की बातें पूछने लगीं । यशोदाजी ने पूछा – आजकल महारानी कीर्ति क्या विचार करती हैं ? अपने भवन में कौन सी वस्तु का अधिक प्रेम से संग्रह करती हैं । वृषभानुरायजी अपने अनुचरों को क्या आज्ञा देते रहते हैं ? दूर देश में उत्पन्न हुई कौन सी वस्तु को लेते हैं ? जब महीभानुजी के पुत्र नौ भानु (वृषभानुजी आदि नौ भाई) एक साथ बैठते हैं, तब उनके मध्य क्या चर्चा होती है ? यह बात तुम मुझे सत्य-सत्य बताओ । राजा वृषभानु कौन सा दान उत्साह से देते हैं ? किस रीति से आगे भी वे दान देंगे, यह हमें सुनने की कामना है । आजकल नगर में किस बात की विशेष चर्चा होती रहती है ? हे विलक्षण बाला ! तुम मुझे ज्यों की त्यों सब बताओ । यशोदाजी की बातों को सुनकर वह ढाँढ़िनी अपने मन में बिल्कुल निः शंक होकर सब समाचार सुनाने लगीं । उसकी बातें यशोदाजी को इतनी रुचिकर प्रतीत होती थीं जैसे किसी अत्यन्त दरिद्र भिखमंगे को अपार खजाना मिल गया हो । ढाँढ़िनी ने कहा – आजकल हमारे यहाँ के राज

द्वार में गहनों को रत्नों से जड़ाया जा रहा है । ऐसे रत्न जटित आभूषणों (गहनों) को कीर्ति रानी अपने भण्डार में संग्रह करके सावधानी से रखती हैं । देश-विदेश से अनेक तरह के व्यापारी आजकल बरसाने में आया करते हैं । कोई तो सुन्दर-सुन्दर बड़े कीमती विभिन्न रंगों के वस्त्र लाते हैं । अनेक लोकों में जो बहुमूल्य रत्न उत्पन्न हुए हैं, उन्हें वे व्यापारी वृषभानुजी के भवन में रखते जाते हैं । सुन्दर जाति के उत्तम कोटि के हाथी-घोड़ों को वृषभानुजी प्रसन्न मन से लेते हैं । इन सबके साज-श्रृंगार की अपने सेवकों को आज्ञा देते हैं । वृषभानुजी अपने भाइयों के साथ उन्हें समझाते हुए यही बात करते हैं कि अपनी लाड़ली बेटी का विवाह बड़े घर में करना है । राधा के पिता वृषभानुजी बड़े उदार हैं, वे अनेक प्रकार की सम्पत्ति का दान करते रहते हैं । समस्त शोभा की सीमा राधा अखिल लोकों की एक विलक्षण मणि हैं । बरसाने गाँव के हर कोने-कोने में आजकल यही चर्चा होती है कि नन्दगाँव के राजा श्रीनन्दरायजी का एक बड़ा ही सुन्दर श्याम नामक पुत्र है । वैसे तो बेटा बहुत सुन्दर, बहुत बढ़िया है किन्तु उसके कुछ अवगुण भी सुनने में आते हैं, जैसे कि वह माखन चोर है, घर-घर माखन की चोरी करता है । यह लक्षण तो राजा के पुत्र का नहीं होना चाहिए, यही मेरे मन में अत्यधिक संशय है । ढाँढ़िनी की इस बात को सुनकर यशोदाजी कुछ आनन्दित सी और कुछ शंकित सी होकर ढाँढ़िनी की ओर देखने लगीं । उस ढाँढ़िनी को वृषभानुजी की नेगिनी (नेग-न्यौछावर लेने वाली) समझकर यशोदाजी और उनके साथ की नारियाँ उसको भेंट देकर प्रसन्न करने लगीं । यशोदाजी की एक सखी ने उसे मणि की एक अँगूठी भेंट में दी, एक ने सुन्दर दुलरी दी । यशोदाजी ने तो अपने गले से उतारकर मणियों का हार उस ढाँढ़िन को भेंट में दिया । हँसकर ढाँढ़िन ने यशोदाजी से कहा – अरी रानी ! तुम किस नगर में रहती हो ? तुम कहाँ से आई हो, यह तो मुझे बताओ । ढाँढ़िन की बात को सुनकर यशोदाजी तो मौन रहीं, उनकी अन्य सखियों ने उत्तर दिया – हम लोग ब्रह्माचल पर्वत की तलहटी, गिरिराज गोवर्धन की तलहटी होती हुई अपने भवन को जा रही थीं । हम लोग तो नन्दबाबा के गाँव में रहती हैं, जो इस ब्रज के राजा हैं । उन्हीं का पुत्र है वह श्यामसुन्दर, जिसका रूप तीनों लोकों को मोहित करने वाला है । इस समय एक नन्द बाबा की ही ब्रज के सभी घरों में मान-प्रतिष्ठा है, उनके कुल के स्तम्भ के रूप में महा बलवान पुत्र कृष्ण उत्पन्न हुआ है । उसने अपनी कनिष्ठ उँगली के नाखून पर ही इतने विशाल गोवर्धन पर्वत को धारणकर सारे ब्रज की इन्द्र की प्रलयंकारी वर्षा से रक्षा की थी । उसमें कुछ अवगुण भी हैं, हे नारी ! तुम सच कहती हो । कान खोलकर सुन लो । वृषभानुजी का गाँव बड़ा ही उदार है, वृषभानुजी ने नन्दजी को अपने समान प्रभावशाली बनाया, सबके सामने घोषणाकर उन्हें अपनी भुजाओं में बसाया । हे भामिनी ! तुम अपने मन में क्रोध मत करो । तुम नन्दजी को वृषभानुजी से अलग मत मानो । तुमने सच ही कहा कि राजा का बेटा चोरी करे, यह तो संसार में बहुत बड़ा दोष माना जायेगा । उस एक नन्दलाला ने ही गिरि गोवर्द्धन को नहीं धारण किया था, इस कार्य में तो ब्रज के सभी गोपों ने उसकी सहायता की थी । उस समय सम्पूर्ण ब्रज चौरासी कोस के ब्रजवासी गोवर्द्धन पर्वत के नीचे एकत्रित हो गये थे । गिरिराज को धारण करने का यश तो तुम बरसाना वासियों को भी है । गुण-अवगुण तो सभी में होते हैं, कहाँ तक उनको कहा जाए ? कितने भी अवगुण हों परन्तु राजा तो राजा के ही यहाँ विवाह सम्बन्ध स्थापित करता है । वृषभानुजी की ढाँढ़िनी ने नन्दगाँव की नारियों से कहा – कीर्ति रानी ने मुझसे राधा की सगाई हेतु वर देखने को कहा है, इसी कार्य की मुझे विशेष चिन्ता बनी रहती है । इसी कार्य की पूर्ति के लिए ही मैं भ्रमण करती रहती हूँ । तुम सभी नन्दगाँव की नारियो ! अपनी ब्रजरानी यशोदाजी के पास जाकर यही कहना कि अब भी समय है, तुम किसी प्रकार अपने पुत्र की चोरी की आदत को छुड़ा दो । मेरी ओर से यशोदाजी के चरणों में सादर प्रणाम कहना । कान्ह कुँवर की माता सब बातों को अच्छी प्रकार से समझती हैं । विधाता और रमानाथ नारायण हमारे अनुकूल होंगे तो बरसाने के राजा वृषभानु जी की पुत्री का पाणिग्रहण संस्कार श्यामसुन्दर के साथ ही होगा । यशोदाजी से कहना कि परजन्यजी और उनके पुत्र श्रीनन्दरायजी के पुण्यों के भण्डार सहायक होंगे तो आपके पुत्र नन्दनन्दन ही वृषभानु

रानी कीर्ति की कन्या राधा को वरेंगे किन्तु फिर भी प्रथम वचन जो कीर्तिजी ने कहे, वे तो वज्र की लीक के सामान अटल हैं कि हे नन्दरानी ! अपने खोटे सिक्के (अपने लाला के दोषों को) को तो तुम ही सुधार सकती हो । इतने में ही एक बरसाने की गोपिका गह्वर वन से होकर निकली और उसने यह सूचना दी कि वृषभानु दुलारी राधा अपनी सखियों के साथ गह्वर वन के भीतर निकुंजों में खेल रही हैं । उसी समय बरसाने की ढाँढ़िनी ने नन्दगाँव की नारियों से विदा माँगी और वह अपने घर चली गयी । इधर ये सब नन्दगाँव की नारियाँ राधा का नाम सुनकर गह्वर वन के भीतर गयीं । उन्होंने वहाँ श्रीराधारानी का अभूतपूर्व, लोकातीत सौन्दर्य देखा । उनके मुख की दिव्य ज्योति सघन वन के अन्धकार को नष्ट कर रही थी, ऐसा प्रतीत होता था कि वन रूपी नव घन (बादल के समूह) में कोटि बिजलियों (दामिनियों) की प्रभा प्रकाशित हो रही हो । श्रीराधारानी के इस उपमा रहित अवर्णनीय सौन्दर्य को देखकर यशोदाजी के सहित उनकी समस्त सखियों की मति (बुद्धि) मानो पंगु हो गयी । प्रेम से विवश होकर यशोदारानी ने फिर भी अपनी मति के अनुसार श्रीवृषभानु कुँवरि के सौन्दर्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की । श्रीयशोदाजी ने कहा – 'कीर्तिजी की कूँख धन्य है और वृषभानुजी भी धन्यातिधन्य हैं ऐसी पुत्री को पाकर ।' गह्वरवन में यशोदाजी श्रीराधारानी के दर्शन कर प्रेम आनन्द में विह्वल होकर उनकी गोद भर देती हैं । यशोदाजी अपने भी भूरि भाग्य की सराहना करती हैं और अत्यधिक प्रेम एवं आनन्द की अधिकता से उनका हृदय भर जाता है, फिर आतुरता के साथ शीघ्रतापूर्वक लड़ैती श्रीराधारानी के पास जाकर उनकी गोद भर देती हैं । श्रीकीर्तिकुमारी के शीश पर यशोदाजी अत्यधिक वात्सल्य के साथ अपना हाथ रखती हैं और बारम्बार उनकी बलैया लेती हैं । ब्रजपति श्रीनन्दरायजी की रानी अपने बहुमूल्य आभूषणों को वृषभानुनन्दिनी के ऊपर न्यौछावर कर देती हैं । यशोदाजी को ऐसा करते देख उनकी सखियाँ भी श्रीराधा के पास चली आती हैं । यशोदाजी बड़े ही आनन्द से श्रीराधारानी की गोद में मेवा भर देती हैं । नन्दजी की गृहिणी बहुत प्रकार से वृषभानु कुँवरि को लाड़ लड़ाती हैं । उनके केशों में उत्तम कोटि का फुलेल लगाती हैं और अच्छी प्रकार से वेणी (चोटी) की रचना कर देती हैं । कुँवरि के मस्तक पर रोली-बिन्दी लगा देती हैं । इसके बाद कजरौटी (काजल की डिबिया) खोलकर श्रीजी के नेत्रों में अंजन (काजल) लगाती हैं । ललिताजी से यशोदाजी हँस-हँसकर बात करती हैं, कहती हैं – 'ललिता ! कीर्तिजी के पास जाकर मेरी ओर से विनती करना और कहना कि मेरे श्यामसुन्दर के साथ शीघ्र ही राधा की सगाई कर दो ।' यशोदाजी की बात सुनकर ललिताजी चौंक जाती और कहती हैं – 'अजी, आप कौन हैं ? मैं तो अभी तक आपका नाम और गाँव भी नहीं जान पायी । देखने में तो आप बड़ी-बूढ़ी हैं और सब प्रकार के जतन कर रही हैं । वन में सगाई की चर्चा कर रही हैं, इसे सुनकर लोग बहुत हँसेंगे । जो आपने 'श्याम' नाम का उच्चारण किया तो वह क्या है, क्या वह कोई अच्छी सी वस्तु है, जिसकी चर्चा हम लोग कीर्तिजी से करें तो वह अति प्रसन्न हो जायेंगी ।' ऐसा कहकर ललिताजी सहित सभी गोपकन्यायें गह्वर वन में क्रीड़ा करने लगीं । उस समय उपनन्दजी की पत्नी विशाखाजी से बोलीं – 'तुमने कृष्ण, गोविन्द, गिरिधर, गोकुलचन्द्र आदि नाम तो सुने होंगे, जिस बालक के ये नाम हैं, ये उसी की माता हैं, इनका नाम यशोदा है और ये नन्दगाँव के राजा श्रीनन्दरायजी की पटरानी हैं । उपनन्दपत्नी की बात सुनकर विशाखाजी हँसते हुए बोलीं – 'अजी ! हम सभी सखियाँ इन्हें जानती हैं । ये तो ब्रज में प्रसिद्ध उस चोर की माँ हैं । वे चोर तो यहाँ नित्यप्रति ही वन-वन में गायें चराते डोलते रहते हैं । इनके बेटा बड़े ही कपटी और धूर्त हैं, ये वन में झूठे ही अपने को यहाँ का राजा बताकर हम सब सखियों से दान माँगा करते हैं । अरी यशोदा मैया ! तुमने ही इस संसार में सबसे अनोखे पुत्र को जन्म दिया है ।' विशाखाजी की बात को सुनकर वहाँ उपस्थित युवती, बालिका और वृद्ध – समस्त गोपिकायें जोर-जोर से हँसने लगीं । अपने बालक के चरित्र सुनकर यशोदाजी अपने भाग्य को बहुत बड़ा मानने लगीं । उसी समय चतुर सखी चित्रा यशोदाजी के समक्ष आई और उसने मैया का बहुत सम्मान किया और उनसे कहा – 'हे नन्दरानी ! आप बरसाने में राजा

वृषभानुजी के महल में चलिए । आप थकी हुई होंगी, यहाँ से थोड़ी ही दूर पर वृषभानु भवन है, वहाँ चलकर आप विश्राम भी कीजिए, जिससे शरीर की थकावट और श्रम मिट जाए ।' यशोदाजी बोलीं – 'मेरा घर और वृषभानुजी का घर दोनों ही घर मेरे लिए समान हैं । ऐसा कहकर यशोदाजी ने श्रीराधारानी को अपनी गोद में बिठा लिया और उन्हें कोटि-कोटि आशीष देने लगीं तथा भगवान् नारायण से हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगीं – 'हे सिन्धुसुता लक्ष्मी के नाथ ! तुम मेरी मनोकामना को पूर्ण करो ।' राधा-राधा नाम रटती हुई यशोदाजी राधारानी के प्रति अतिशय प्रेम से भर गयीं । इसके बाद उन्होंने श्रीजी की सभी सखियों को स्वर्णजटित किनारी वाली ओढ़नी बड़े ही आदर के साथ ओढ़ाई । अब वे भानु कुँवरि से विदा होने लगीं और प्रेम सिन्धु में स्नान कर उठीं । जैसे-जैसे वे अपने घर की ओर चलने के लिए पाँव आगे बढ़ातीं, उनके कदम पीछे राधारानी की ओर मुड़ने लगते । श्रीराधारानी का अलौकिक रूप देखकर यशोदाजी तो पागल सी हो गयीं । बरसाने से आगे चलकर जब वे संकेत वट पहुँचीं तो वहाँ उन्होंने संकेत देवी को हाथ जोड़कर प्रणाम किया और उनसे मनौती माँगी – 'हे संकेत देवी ! यदि मेरी मनोकामना पूर्ण हो गयी तो मैं अनेक प्रकार के दिव्य उपचारों से तुम्हारी पूजा करूँगी ।' इसके बाद यशोदाजी अपने महल को चली गयीं हृदय में अपने पुत्र के विवाह की उत्कट अभिलाषा से भरकर । नन्दभवन में पहुँचकर यशोदाजी सभी से बड़े ही अनुराग के साथ ब्रह्माचल पर्वत और गह्वर वन की कथा कहने लगीं । उनकी बातों को ब्रजपति श्रीनन्दरायजी, पुत्र मदन गोपाल और सारा परिवार ध्यान से सुनने लगा । शोभा की सिन्धु श्रीराधारानी के रूप-लावण्य का यशोदाजी अत्यन्त प्रेम से वर्णन करने लगीं परन्तु रूप-सिन्धु का वे पार नहीं पा सकीं । वृषभानुकुँवरि के नाम, रूप, गुण की महिमा सुनकर सभी का हृदय उमंग से भर गया । नन्द लाड़ले मोहन तो वृषभानु लड़ैती के रूप-गुण का वर्णन सुन-सुनकर हृदय में अत्यन्त ही संकोच करने लगे, फिर तो उन्होंने लज्जित होकर बड़ी ही चतुरता की और अपने माता-पिता से आज्ञा लेकर शयन कक्ष में सोने के लिए चले गये ।

# श्रीइष्ट-आराधन का आधार 'गौ-सेवाराधन'

(१) गौओं का समुदाय जहाँ बैठकर निर्भयतापूर्वक साँस लेता है, वह उस स्थान की शोभा बढ़ा देता है और वहाँ के सारे पापों को खींच लेता है । (महाभारत, अनुशासन पर्व – ५१/३२)

(२) गौभक्त के लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं है ।

(महाभारत, अनुशासन पर्व – ८३/५२)

(३) गौओं के मध्य में ईश्वर की स्थिति होती है ।

(महाभारत, अनुशासन पर्व – ७७/२९)

(४) जिस घर में गाय नहीं है, वह घर श्मशान के समान है । (अत्रि संहिता – ३१०)

(५) अट्ठाईस करोड़ देवता गौ के रोमकूपों में स्थित हैं । गौमूत्र में भगवती गंगा के पवित्र जल का निवास है और गोमय (गोबर) में भगवती यमुना तथा सभी देवता प्रतिष्ठित हैं । (बृहत्पराशर स्मृति - ५/३८, ३९)

(६) गाय-बैलों को माता-पिता के समान पूज्य मानें ।

(लोकनीति 'बौद्ध साहित्य' – ७/१४)

(७) ब्राह्मण और क्षत्रिय गौ के नितम्ब हैं । देवगण गौ की गुदा हैं । मनुष्य गौ की आँतें हैं । अन्य प्राणी गौ के आमाशय हैं । (अथर्ववेद ९/७/९,१६,१७)

अथर्ववेद के इन मन्त्रों (अथर्ववेद ९/७/९,१६,१७) में परोक्ष रूप से यह बताया गया है कि हम सब लोग (सभी जीव) 'गौ' के शरीर के विभिन्न अंग हैं । यदि गाय के शरीर को कष्ट मिलता है तो वह कष्ट हमको ही मिलता है । गौसेवा इसी मनःस्थिति में की जानी चाहिए; गौमाता के इन वास्तविक भावों को जानने से ही गौसेवा में सच्ची श्रद्धा उत्पन्न होती है ।

(८) गोमय (गाय के गोबर) पर थूकें नहीं, न ही उस पर मल-मूत्र छोड़ें । (गवोपनिषद्)

(९) किसी दूसरे की गाय को छः माह तक भोजन देने वाला व्यक्ति स्वर्ग-सुख प्राप्त करता है ।

(विष्णुधर्मोत्तरपुराण खण्ड-२, अध्याय-४२)

(१०) सभी गाँवों में गोचर-भूमि रहनी चाहिये, उस भूमि पर पीपल और अन्य फलदार वृक्ष होने चहिये, उसे कभी

भूलकर भी न जोतना चाहिए और न खेती-खलिहान के काम में लाना चाहिये । (भविष्यपुराण, मध्यमपर्व)

(११) अपने माता-पिता की भाँति गौओं का श्रद्धापूर्वक पालन करना चाहिए । गौमूत्र तथा गोमय (गोबर) से कभी घृणा न करें । भीतर से सन्तुष्ट होकर गौओं की परिचर्या करनी चाहिए अर्थात् मन लगाकर परिचर्या करनी चाहिए । (ब्रह्मपुराण)

(१२) जो मनुष्य स्वयं भोजन करने के पहले प्रतिदिन दूसरे की गाय को घास खिलाता है, उसको प्रत्येक समय गौ सेवा का फल प्राप्त होता है । (महाभारत, आश्वमेधिक पर्व, वैष्णव धर्म)

(१३) जो मनुष्य एक समय भोजन करके, दूसरे समय का अपना भोजन गौओं को दे देता है, उसे अनन्त सुख प्राप्त होते हैं । (महाभारत, अनुशासनपर्व - ७३/३१)

(१४) गोमय (गाय के गोबर) को खाद के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए । माघ माह में गोमय को एकत्र करके उसका पूजन करना चाहिए, फिर किसी शुभ दिन में कुदाल से उसे गोड़ना चहिये और सूखने के लिए छोड़ देना चाहिए, फाल्गुन माह में उसे किसी गड्ढे में गाड़ देना चाहिए ताकि उसकी खाद बन जाए । (कृषि-संग्रह 'ऋषि पराशर कृत')

(१५) जो गौ-सेवा से जी चुराते हैं, वे नरकगामी होंगे । हे भगवान् ! गौ-कल्याण के प्रति मनुष्य की उदासीनता का अन्त कर दो । ओ मनुष्य ! गाय तुम्हें आवश्यक भोजन देती है, उसका हित साधन करो ।

(जरथुश्तीय गाथायें – ५१/१४, ३३/४, ४८/५)

(१६) संक्रान्ति, उत्तरायण और दक्षिणायन लगने के दिन चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण, पूर्णिमा, अमावस्या, चतुर्दशी, द्वादशी और अष्टमी – इन दिनों गौ-पूजा करनी चाहिए; इसके बाद उन्हें १ : २ : ४ : ८ के अनुपात में नमक, घी, दूध और ठण्डा जल देना चाहिए । (ब्रह्मपुराण)

(१७) जो मनुष्य जौ आदि के द्वारा गायों की प्रतिदिन पूजा करता है, उसके पितृगण तथा देवता सदा तृप्त रहते हैं ।

(पद्मपुराण, पाताल खण्ड, अध्याय – १८)

(१८) जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल गायों के सींगों का जलाभिषेक करता है और उस जल को अपने मस्तक पर धारण करता है, उसका यह कार्य समस्त तीर्थों में स्नान करने के तुल्य है । (पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड, अध्याय – ४८)

(१९) गौओं और बैलों की पूजा करने से सम्पूर्ण पितरों और देवताओं की पूजा हो जाती है ।

(महाभारत, आश्वमेधिक पर्व, वैष्णव धर्म)

(२०) जो गायों को पैर से ठुकराता है ....., उसको मैं जड़-मूल से काट गिराता हूँ । (अथर्ववेद १३/१/५६)

(२१) गौओं के भोजन कर लेने के बाद भोजन करें और उनके जल पी लेने पर जल पियें ।(विष्णुधर्मोत्तरपु, खण्ड - ३, अध्याय - २९१)

(२२) जब गायें जल पी रही हों, तब विघ्न न डालें; उनके चलने के मार्गों में तथा चारागाहों में जल की व्यवस्था करें । (विष्णुधर्मोत्तरपुराण खण्ड - २, अध्याय - ४२)

## राधारानी-मन्दिर पर मानमन्दिर द्वारा भोजन-प्रसाद-सेवा प्रारम्भ

राधारानी की विशेष अनुकम्पा से श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान ट्रस्ट की ओर से पद्मश्री पूज्यश्री रमेश बाबाजी महाराज के दिशानिर्देशानुसार अक्षय तृतीया के पावन पर्व से राधारानी के मन्दिर में भोजन-प्रसाद-सेवा प्रारम्भ हो चुकी है । पूज्य श्रीब्रजशरणजीमहाराज (श्रीमाताजी गौशाला के संचालक) ने पूज्य बाबाश्री के दिशानिर्देशन में इस व्यवस्था का साकार रूप प्रदान किया । राधारानी मन्दिर में दर्शन करने आने-जाने वाले सभी भक्तजनों को तीन समय का भोजन-प्रसाद दिया जा रहा है, सुबह नाश्ता, दोपहरकालीन भोजन, संध्याकालीन भोजन एवं गर्मियों में नमकीन छाछ, मीठा शर्वत इत्यादि दिया जा रहा है । यह सेवाएँ पूर्णतः निःशुल्क हैं । राधारानी मन्दिर के पास केन्टीन में यह सेवा संचालित हो रही है । वर्तमान में इस सेवा को श्रीहरिपददास बाबा बड़े अच्छे से निभा रहे हैं, माताजी गौशाला के गौसेवक व साधु, संतजन भी सेवा में पूरा सहयोग कर रहे हैं ।

अक्षय-तृतीया दर्शन - राधा-अक्षय युगल सरकार,रसमण्डप

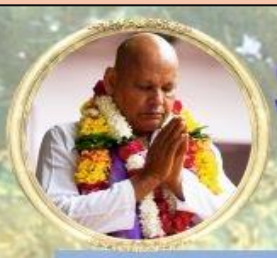

# श्री मानमंदिर

## प्रस्तावित पुनरुद्धार रेखांकित चित्र

मान मंदिर लीला स्थल श्रीराधाकृष्ण की लीला स्थलियों में सबसे प्रमुख है
इस अति विलक्षण लीला स्थली के पुरुद्धार कार्य में जुड़ कर धाम सेवा का दुर्लभ लाभ प्राप्त करें
सेवा राशि देकर रसीद अवश्य प्राप्त करें।

ACCOUNT NUMBER: **59109927338666**
IFSC CODE: **HDFC0000268**
BANK: **HDFC BANK LTD**
BRANCH: **BSA COLLEGE, MATHURA**
संपर्क 9927338666
www.maanmandir.org

आपकी सेवा राशि आयकर अधिनियम 80G/12A के अंतर्गत आयकर छूट के लिए मान्य है
रजिस्ट्रेशन नंबर AADTS716DEF2021401



**ACCOUNT NAME**
**SHRI MAAN BIHARI LAL MANDIR SEVA**
ACCOUNT NUMBER: 59109927338666
IFSC CODE: HDFC0000268
BANK: HDFC BANK LTD
BRANCH: BSA COLLEGE, MATHURA

मान मंदिर लीला स्थल श्रीराधाकृष्ण की लीला स्थलियों में सबसे प्रमुख है
इस अति विलक्षण लीला स्थली के पुरुद्धार कार्य में जुड़ कर धाम सेवा का दुर्लभ लाभ प्राप्त करें

**श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट, गहवरवन, बरसाना ( मथुरा)**
www.maanmandir.org; संपर्क :9927338666

QR कोड

**RNI REFERENCE NO. 1313397- REGISTRATION NO. UP BIL-2017/72945-TITLE CODE UP BIL-04953 POSTAL REGD.NO. 093/2024-2026** श्री मान मन्दिर सेवा संस्थान के लिए प्रकाशक/मुद्रक एवं संपादक राधाकांत शास्त्री द्वारा गुप्ता ओफ़्सेट प्रिंटर्स A- 125/1 , wazipur industriyal area, new delhi- 52 से मुद्रित एवं मान मन्दिर सेवा संस्थान, गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.) से प्रकाशित
**[AGRA/WPP-12/2024-2026 AT 31.12.26 ]**